SAVIDHI-DANMAHĀVIDYĀSTROTRASAMGRAHA (2)

Tantra
T

ॐ ह्रीं

सविधि
दश-महाविद्या-स्तोत्र-संग्रह

(भाग २)

श्रीतारा-स्तव-मञ्जरी

मानद सम्पादक

'कुल-भूषण' पण्डित रमादत्त शुक्ल, एम० ए०

सम्पादक

ऋतशील शर्मा, एम० ए०

प्रथम संस्करण : : पौष पूर्णिमा २०४० वि० : : जनवरी ८४

अ नु क्र म णि का

॥ प्रार्थना ॥

श्यामा वत्सतया करोतु कुशलं तारा तनोतु श्रियम् ।
दीर्घायुर्भुवनेश्वरी वितनुतां विघ्नं हरेत् षोडशी ॥
भैरव्यस्तु कुलावहा रिपु-कुलं सा छिन्नमस्ता हरेत् ।
मातङ्गी वगला-मुखी च कमला धूमावती पातु नः ॥

प्राक्कथन तीन

१ आरती सात

२ पञ्च-श्लोकी प्रातः-स्मरणम् १

३ श्री उग्र-तारा कवचम् २

४ श्रीतारा-गुह्य-कवचम् ६

५ श्रीतारा-दिव्य-कवचम् ८

६ श्रीतारा-त्रैलोक्य-विजय-कवचम् १३

७ त्रैलोक्य-मोहनं श्रीतारा-कवचम् २४

८ श्रीउग्रतारा-हृदयम् २७

९ श्रीताराष्टक-स्तोत्रम् ३०

१० श्रीतारा-कर्पूर-स्तोत्रम् ३३

११ सारस्वत-प्रदं श्रीतारा-स्तोत्रम् ३७

१२ श्रीतारिणी-शत-नाम-रहस्य-स्तोत्रम् ३९

१३ श्रीतारोपनिषत् ४१

१४ श्रीनील-तारा अष्टोत्तर-शत-नाम-स्तोत्रम् ४२

१५ श्रीमहोग्रतारा क्रोधोपशमनं सहस्रनाम स्तोत्रम् ४६

प्रकाशक

पं॰ देवीदत्त शुक्ल स्मारक

शाक्त साधना पीठ

प्रयाग-६

मूल्य १५-०० रु० । सजिल्द मूल्य २०-०० रु०

प्राक्कथन

[१]

'कौल-कल्पतरु' पण्डित देवोदत्त शुक्ल के निर्देशन में प्रवर्त्तित 'सिद्ध-स्तोत्र-माला' के अन्तर्गत द्वितीया महा-विद्या श्रीतारा के स्तोत्रादि का संग्रह 'श्रीतारा-स्तव-मञ्जरी' का प्रकाशन सम्वत् २०१३ में किया गया था। अनेक वर्षों से वह अप्राप्य थी जौर साधक बन्धु उसकी बराबर मांग कर रहे थे। अतः उसे परिवर्धित रूप में पुनः प्रकाशित किया जा रहा है। प्रथम संस्करण में कुल १२ स्तोत्रादि थे, जब कि इस संस्करण में १५ स्तोत्रादि हैं।

भगवती तारा का प्रातःस्मरण स्तोत्र उपलब्ध नहीं था। हमारे अनुरोध से 'कौल-कल्पतरु' शुक्ल जी के शिष्य एवं वयोवृद्ध पूर्णाभिषिक्त साधक कौलाचार्य पण्डित काशीप्रसाद शुक्ल जी शास्त्री द्वारा "पञ्चश्लोकी प्रातः स्मरण" की रचना की गई और पहले पहल उसका प्रकाशन इस संग्रह के आदि में किया गया है। आशा है, उपासक बन्धु इसका उपयोग कर लाभान्वित होंगे।

इस संग्रह के अधिकांश स्तव भैरव कुण्ड, विन्ध्याचल (उ० प्र०) के ब्रह्मीभूत स्वामी अक्षोभ्यानन्द सरस्वती की कृपा से प्राप्त हुये थे। यहां हम उनकी पुण्य स्मृति में हार्दिक श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं।

पूज्य 'कौल-कल्पतरु' शुक्ल जी के अनन्य शिष्य एवं वरिष्ठ पूर्णाभिषिक्त साधक 'कुल-शेखर' श्रीमहेशचन्द्र गर्ग, प्रयाग (उ० प्र०) ने स्तोत्रों के पाठ के शुद्धीकरण में हमारी सहायता की है और सागर (म० प्र०) के श्रीभैरवानन्दनाथ जी ने 'क्रोधोपशमनं' नामक सहस्रनाम की दुर्लभ पांडुलिपि हिन्दी व्याख्या सहित प्रकाशनार्थ भेजने की कृपा की। यह सहस्रनाम पहली बार प्रकाश में आ रहा है। इन दोनों महानुभावों के हम हृदय से कृतज्ञ हैं।

इस संग्रह में प्रकाशित अधिकांश साहित्य 'शाक्त-प्रमोद,' 'मन्त्र-महार्णव', 'बृहत् तन्त्र-सार', 'तन्त्र-दीपिनी' (अप्रकाशित) आदि ग्रन्थों में विखरा हुआ है। प्रकाशित ग्रन्थों में न तो वांछित शुद्ध रूप में मुद्रण हुआ है और न हिन्दी में अर्थ दिया गया है। इस संस्करण में यथाशक्ति सारे साहित्य को शुद्ध रूप में और हिन्दी व्याख्या सहित प्रकाशित किया गया है। संग्रहस्थ साहित्य के पारायण करने-वाले बन्धु स्वयं इस विशेषता को अनुभव करेंगे, ऐसी आशा है।

[२]

यहाँ महाविद्या तारा को साधना के सम्वन्ध में कुछ विवरण देना उचित प्रतीत होता है। 'रुद्र-यामल' के सत्रहवें पटल में और 'ब्रह्म-यामल' के पहले और दूसरे पटल में महर्षि वशिष्ठ-द्वारा की गई तारा महाविद्या की साधना का जो विवरण दिया है, उससे मालूम होता है कि प्राचीन काल में ब्रह्मा के मानस-पुत्र वशिष्ठ ने पिता से तारा-मन्त्र की दीक्षा लेकर सिद्धि-लाभ की आकांक्षा से नीलाचल पर कामाख्या-योनि-मण्डल (वर्तमान कामाख्या-तीर्थ) में कठोर तपस्या की किन्तु दश सहस्र वर्षों तक आराधना करने पर भी उन्हें संसार-तारिणी तारा का अनुग्रह प्राप्त नहीं हुआ। इस पर वशिष्ठ कुपित होकर पिता के समीप गये और उनसे अन्य मन्त्र ग्रहण करने की अभिलाषा प्रकट की। साथ ही वशिष्ठ ने

अपनो कठिन तपस्या का वृत्तान्त इस प्रकार कह सुनाया—'हे पिता, आपने यह दुराराध्या विद्या मुझे क्यों प्रदान की ? हविष्यान्न का भोजन करते हुये मैंने नीलाचल पर एक सहस्र वर्षों तक आराधना की, किन्तु तारिणी की मुझ पर कृपा नहीं हुई। फिर मैंने प्रतिदिन चुल्लू भर जल पीते हुये एक सहस्र वर्षों तक देवी की साधना की, परन्तु उसकी कृपा नहीं मिली। इसके बाद निराहार रहते हुये एक पैर पर सीधे खड़े रहकर तारा-मन्त्र का जप करते-करते आठ सहस्र वर्ष और बिताये, परन्तु फिर भी उस अकरुणा की करुणा संचारित नहीं हुई। हे प्रभो ! इस प्रकार दश सहस्र वर्षों तक कामाख्या योनि-पीठ में परमेश्वरी तारा की समाराधना करने पर भी आज तक उसका अनुग्रह प्राप्त नहीं हुआ। अतएव बड़े दुःख के साथ इस दुःसाध्य विद्या को छोड़ता हूँ।'

लोक-पितामह ब्रह्मा वशिष्ठ को सांत्वना देते हुये तारा के माहात्म्य का वर्णन करने लगे—'तारा-विद्या के समान तीन लोकों में और कोई विद्या नहीं है। इनको छोड़कर तुम और दूसरी किस विद्या को ग्रहण करोगे ? इस तारा देवी के अनुग्रह से मैं चौदह भुवनों की रचना और चार वेदों की व्याख्या अनायास करता हूँ। इसी भुवन-तारिणी विद्या की समाराधना करके तत्व-ज्ञान प्राप्तकर विष्णु जगत् का पालन करते हैं। प्रलय-काल में महादेव तारा की ही समाराधना करके रुद्र-मूर्ति धारण कर अखिल जगत् का संहार करते हैं। वह नीला देवी (तारा) परमा शक्ति है, वह जीव का समस्त संकटों से परित्राण करती है, वह करोड़ों सूर्यों की प्रभा के समान प्रकाशवान और करोड़ों चन्द्रों के समान सुशीतल है। वह महाकाल-पत्नी तारा करोड़ों विद्युत्-लतिकाओं के समान ज्योतिर्मयी है। तारा भुवनों का त्राण करतेवाली और ब्रह्म-ज्ञान-मयी है। अनुद्विग्न—शांत-चित्त से उसके श्रीचरणों की आराधना करो। हे वत्स वशिष्ठ ! नीलाचल पर पुनः जाकर कामाख्या-योनि-मण्डल में तारा-महाविद्या की साधना में प्रवृत्त हो। शीघ्र ही तुम्हें सिद्धि प्राप्त होगी, इसमें सन्देह नहीं।'

ब्रह्मा के निर्देशानुसार वशिष्ठ नीलाचल पर जाकर शौचाचार-परायण होकर फिर तपस्या में लग गये, किन्तु एक सहस्र वर्षों तक परम मन्त्र का जप और इष्टदेवी का ध्यान करने पर भी उन्हें महादेवी के पाद-पद्मों के दर्शन सुलभ नहीं हुये। इस पर महामुनि वशिष्ठ क्रोध से प्रज्वलित होकर तारा-देवी को शाप देने को उद्यत हुये। सहसा समौल वन-कानना वसुन्धरा कम्पित हो उठी, देव-गण में महा हाहाकार की ध्वनि मच गई। वशिष्ठ ने दो बार आचमन करके देवी को अभिशाप दिया कि वह फलदा नहीं होगी।

अकस्मात् कुलेश्वरी महा-विद्या तारा वशिष्ठ के सम्मुख आविर्भूता होकर उनसे बोलीं—'मेरा तत्व न जानते हुये विरुद्धाचार ग्रहण कर तुमने इतने समय व्यर्थ ही श्रम किया। तुम मेरी पूजा जानते नहीं हो, न तुम मेरे कुलागम की चिन्ता जानते हो। योगाभ्यास के द्वारा मेरे पाद-पद्मों का दर्शन कैसे करोगे ? चीनाचार के बिना मैं कदापि प्रसन्न नहीं होती। मेरी आराधना केवल बुद्ध-रूपी विष्णु ही जानते हैं, और कोई दूसरा ठीक-ठीक उसे नहीं जानता। हे सुव्रत, उन्हीं के उपदिष्ट आचार से मेरी आराधना करो। तब मैं तुम पर प्रसन्न होऊँगी, सन्देह नहीं। तुम अर्थववेदानुगामी बौद्ध देश महा चीन को जाओ। वहाँ जाकर महा-भाव-मय मेरे पाद-पद्मों का दर्शन करते हुये तुम मेरे कुलज्ञ और महा-सिद्ध हो जाओगे।' वशिष्ठ को इस प्रकार निर्देश देकर भगवती तारा अन्तर्हिता हो गईं।

अनन्तर महा-मुनि वशिष्ठ तारा महाविद्या की साधना की आचार-पद्धति जानने के लिये महा-चीन (तिब्बत) की यात्रा पर चल पड़े। उन्होंने हिमालय के पार्श्व में बुद्धदेव के दर्शन किये। शाक्यमुनि

गौतम बुद्ध कलियुग में आविर्भूत हुये थे। पूर्व-काल में दीपशर, कौंतिल्य, मंगल इत्यादि नाम-धारी अन्य ३२४ बुद्ध प्रादुर्भूत हुये थे। 'बुद्ध-वंश' नामक पाली ग्रन्थ में इनका विवरण दिया है।

वशिष्ठ ने देखा—रूप-यौवन-सम्पन्ना, मद्य-पान-रता, शृङ्गार-रसाविष्टा, भय-लज्जा-विहीना, देवी-ध्यान-परायणा सहस्र रमणियों-द्वारा परिवेष्टित होकर बुद्ध अवस्थित हैं। वे स्वयं मदिरा-पान से विह्वल होकर मन्द-मन्द दृष्टि का निक्षेप कर रहे हैं। बुद्ध के संगी सभी सिद्ध-गण दिगम्वर हैं।'

इस दृश्य को देखकर वशिष्ठ अतीव विस्मित हुये संसार-तारिणी तारा का स्मरण करके विचार करने लगे—'बुद्ध-रूपी विष्णु यह क्या कार्य कर रहे हैं।'

इसी समय हठात् आकाशवाणी हुई।

आचारः परमार्थोऽयं तारिणी-साधने मुने ! एतद्-रुद्ध-भावस्य मते नासौ प्रसीदति ॥

यदि तस्याः प्रसादं त्वमचिरेणाभिवांछसि । एतेन चीनाचारेण तदा त्वं भज सुव्रत ॥

'हे मुने ! तारिणी-साधन में यह आचार प्रशस्त है। इससे विरुद्ध भाव की साधना से तारादेवी प्रसन्न नहीं होती हैं। हे सुव्रत ! यदि तुम शीघ्र उनकी प्रसन्नता चाहते हो, तो चीनाचार-क्रम से उनकी अर्चना करो।'

इस आकाशवाणी को सुनकर वशिष्ठ बुद्ध-रूपी विष्णु के समीप गये और उनकी शरण ग्रहण की। उन्होंने प्रार्थना की कि—हे बुद्ध-रूप-धारी अव्यय महादेव ! सदा व्याकुल-चित्त, अतिदीन इस ब्रह्मा-पुत्र वशिष्ठ की रक्षा करो। महा-देवी की साधना के लिये मैं आया हूँ। आपके आचार को देखकर मेरे हृदय में शङ्काएँ उठती हैं। आपके घर में मद्य-पान, मांस-भोजन और स्त्री-सेवनादि कार्य सर्वदा अनुष्ठित होते हैं। यह किस प्रकार ?

बुद्ध ने उत्तर दिया—हे वशिष्ठ, मैं तुमको उत्तम कौल-मार्ग का उपदेश करता हूँ। तुम प्रसन्न मन से सुनो। इसके विज्ञान मात्र से साधक तत्क्षण ही रुद्र-रूप हो जाता है। हे मुने, तारिणी की साधना का यह आचार प्रकाशनीय नहीं है। तुम्हारी भक्ति के वश मैं इसका प्रकाश करता हूँ।

वशिष्ठ को चीनाचार का उपदेश करते हुये बुद्ध बोले—उच्च-स्तर की साधना के साधक को निम्न-स्तर के साधक-गण की तरह विधि-निषेध के अधीन होकर चलना नहीं होता। सब प्रकार के विकार-हेतुओं के वीच में रहते हुये भी साधक को निर्विकार रहना होता है, यही चीनाचार का गुह्य रहस्य है। इस स्तर की साधना में साधक को वाह्य स्नान, शौचाचार, जप और तर्पणादि अनुष्ठान की आवश्यकता नहीं रहती। ये सभी व्यापार मानसिक भाव से किये जाते हैं—

स्नानादि मानसः शौचो मानसः प्रवरो जपः। पूजनं मानसं दिव्यं मानसं तर्पणादिकम्।

इस आचार की साधना के साधक के लिये सभी काल शुभ हैं, अशुभ काल नाम का कुछ नहीं है। दिवा, रात्रि, संध्या या महा-निशा की आराधना में कोई अन्तर नहीं है। इसमें शुद्धि और अशुद्धि की अपेक्षा नहीं है, मेध्य-अमेध्य का विचार नहीं है। बिना स्नान किये हुये अथवा भोजन कर चुकने की अवस्था में भी देवी की पूजा सर्वदा की जाती है। इस स्तर की साधना में साधक किसी से और विशेष कर नारी से द्वेष न करे। नारी की सदा पूजा करे। इस आचार के अनुष्ठान मात्र से साधक को भव-सागर में और डूबना नहीं होता। इससे समस्त शोक शान्त हो जाते हैं। यह आनन्द आदि विभूतियाँ प्रदान करता है। यह तत्व-ज्ञानमय और साक्षात् विमुक्ति-फल-दायक है।

बुद्ध-रूपी गुरु से उपदेश सुनकर वशिष्ठ 'कुल-मण्डल' के सम्पर्क में पहुँचे और पञ्च-तत्वों से बार-बार साधना करके पूर्ण योगी हो गये।

ऐसी जन-श्रुति है कि महा-मुनि वशिष्ठ ने बुद्धदेव से दीक्षा ग्रहणकर 'तारापुर' नामक स्थान में आकर सिद्धि-लाभ किया। पश्चिमी बंगाल के वीरभूम जिला में तारापुर गाँव है। इस स्थान में उत्तर-वाहिनी द्वारका नदी के किनारे 'तारा-पीठ' विख्यात है। यह एक सिद्धपीठ है। तारा-पीठ की अधिष्ठातृ देवी वशिष्ठ की आराधिता 'तारा' और भैरव 'चन्द्रचूड' हैं। 'तारापुर' के सम्बन्ध में योगिनी तन्त्र, छठे पटल में उल्लेख मिलता है—

'वक्रनाथ के ईशान-कोण में और वैद्यनाथ की पूर्व-दिशा में 'तारापुर' नामक एक नगर है। उस स्थान में शिला-मयी तारादेवी वर्त्तमान हैं। यत्नपूर्वक उस तीर्थ में जाये। वहाँ तीन लाख जप करने से सर्व-सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं।'

तारापुर में वशिष्ठ द्वारा प्रतिष्ठित तारा-मूर्त्ति का जीर्ण अंश और उनके द्वारा स्थापित पञ्च-मुण्डासन आज भी साधक गण-द्वारा पूजा व समादर पाते हुये वर्त्तमान हैं। आधुनिक काल में वामाक्षेपा नामक विख्यात तांत्रिक साधक ने उक्त सिद्ध-पीठ में तारादेवी की साधनाकर सिद्धि-लाभ किया, जिनका अद्भुत चरित्र वंगदेश में विशेष रूप से प्रसिद्ध है। विक्रम सं० १८९१ में एक निष्ठावान् ब्राह्मण के परिवार में वामाक्षेपा का जन्म हुआ था। उनका पूर्वाश्रम का नाम वामाचरण भट्टाचार्य था। वे तारापुर के महाश्मशान के निकटवर्ती तारा-मन्दिर में निवास करते थे। विक्रम संवत् १९६८ में ७७ वर्ष की आयु में वामाक्षेपा इस धाम का त्याग करके तारा-पद में लीन हो गये।

[३]

भगवती तारा की साधना में सफलता पाने हेतु कौलाचार आवश्यक है, इसकी सूचना वशिष्ठ ऋषि के वृत्तान्त से तो मिलती ही है, साथ ही विविध स्तोत्रों की फल-श्रुतियों में विभिन्न प्रयोगों के जो संकेत मिलते हैं, उनसे भी इसी बात की पुष्टि होती है। यह सच है कि कौलाचार के अधिकारी वही होते हैं, जो वैदिकाचार, वैष्णवाचार, दक्षिणाचार आदि पूर्व आचारों के अभ्यास से संयम-नियमादि के पालन में समर्थ हो चुकते हैं। इसी से प्रस्तुत संग्रह में स्तोत्रों के हिन्दी-रूपान्तर देते समय विशिष्ट साधनाओं का स्पष्टीकरण नहीं किया गया है। अधिकारी साधक उन्हें सहज ही हृदयङ्गम कर सकेंगे, ऐसी आशा है।

आरती

मोल सरस्वति मातु श्रीतारिणि माता, मां जय तारिणि माता ।
सर्वेश्वरि विश्वेश्वरि, भुवनेश्वरि सुमनेश्वरि, सम्पति सर दाता ।
जय देवि, जय देवि, प्रत्यालीढ-पदा, मां प्रत्यालीढ-पदा ।
फुल्लेन्दींवर-लोचनि, फुल्लेन्दीवर-लोचनि, त्रि-नयनि सुर-वरदा । जय देवि, जय देवि० ॥१

एक-जटा कल-नादिनि, विद्या पर-गाता, मां विद्या पर-गाता ।
अशरण-शरण विधाता, नभ सुर-सरि-पाता । जय देवि जय देवि० ॥२
रवि शशि वसु अम्बक त्रय, कर्ण-खचित कमला, मां कर्ण-खचित कमला ।
पद्मज पत्र प्रमोहन, पद्मज पत्र प्रमोहन, पत्र-पालिनि प्रमिला । जय देवि, जय देवि० ॥३
गलित-चिकुर सुर-पर जर, हरिहर पर ब्रह्मा, मां हरिहर पर ब्रह्मा ।
अलख अगोचर ऋषि-मुनि, अलख अगोचर ऋषि-मुनि, अरचित पद परमा । जय देवि० ॥४

ताटङ्कारुण वारुण, मणि-मुक्ता-माला, मां मणि-मुक्ता-माला ।
गज-गंडज मणि फणि-मणि, गज-गंडज मणि फणि-मणि, चिन्तामणि माला । जय देवि० ॥५

नाक सुवासित झूलनि झूलत मुख अधरा, मां झूलत मुख अधरा ।
पञ्च प्रपञ्चिन्ह रोकत, पञ्च प्रपञ्चिन्ह रोकत, आकर्षण मधुरा । जय देवि, जय देवि० ॥६

कङ्कण-नाग महा-छवि, मणि-भुज शिर माला, मां मणि-भुज शिर माला ।
खड्ग कमल खप्पर कर, खड्ग कमल खप्पर कर, कर्तरि जग-पाला । जय देवि, जय देवि०॥७

कण्ठ महा-छवि शारद, वीण निनादिनि मां, पर-वीण निनादिनि मां ।
स्वर-पर स्वर-मय स्वर-सर, स्वर-पर स्वर-मय स्वर-सर स्वर-वादिनि स्वर मां, जय देवि०॥८

प्रकृति कला परिपूरण, मध्य सुरम मोहन मां, मध्य सुरम मोहन ।
गिरि-द्वय परम मनोहर, गिरि-द्वय परम मनोहर, बिच घाटी सोहन । जय देवि, जय देवि० ॥९

मुक्त सुमाल सरित सम, पय-सर गिरि शोभा, मां पय-सर वन शोभा ।
भक्त पियावत तन मन, भक्त पियावत तन मन, जन पोषण शोभा । जय देवि, जय देवि० ॥१०

पञ्चक पञ्च प्रपञ्चक, पञ्च परा नाभी, मां पञ्च परा नाभी ।
तत्त्व-विमर्षणि पर-गुण, तत्व-विमर्षणि पर-गुण, गुण-तर परमाभी । जय देवि, जय देवि०॥११

रवि बहु अंड नखत गण, अगणित गति प्रसवे, मां अगणित गति प्रसवे ।
जननि महा-हरि-पोषणि, जननि महा-हरि-पोषणि, पोषणि छिन ग्रसवे । जय देवि० ॥१२

कलप-विरछ कदली-सम, उपम महा जंघा, मां उपम महा जंघा ।
जानु-द्वय गज-गंडक, जानु-द्वय गज-गंडक, ध्यावत सुर-संघा । जय देवि, जय देवि० ॥१३

मणिपुर-पद्म सुधा-सर, सरज चरण पोती, मां सरज चरण पोती ।
नख मणि जोत चढ़त तम, नख मणि जोत चढ़त तम, समुद तरत मोती । जय देवि० ॥१४

ऐं ह्रीं श्रीं ह्रों ॐ ह्रों, त्रीं हुँ फट् ह्सौं हूं, मां त्रीं हुँ फट् ह्सौं हूं ।
ऐं ॐ ह्रीं त्रीं हुँ फट्, ऐं ॐ ह्रीं त्रीं हुँ फट्, स्त्रीं त्रीं ह्रौं सों हूं । जय देवि, जय देवि० ॥१५

मणि-धरि वज्रि शिखरिणी, सर्व-वशङ्करि मां, जय सर्व-वशङ्करि मां ।
अक्षोभ्येण विराजित, अक्षोभ्येण विराजित, अलख निरञ्जनि मां । जय देवि, जय देवि०॥१६

शाब-हृदासन-वासिनि, शव-वाहिनि पूरा, मां शव-वाहिनि शूरा ।
गज-चरमाम्बर-धारिणि, गज-चरमाम्बर-धारिणि, किङ्किणि-ध्वनि पूरा । जय देवि० ॥१७

अग्नि-चिता चित-रञ्जिनि, भञ्जिनि भव माया, मां भञ्जिनि भ्रम माया ।
वैरोचन-मन-कर्षनि, वैरोचन-मन-कर्षनि, दर्शनि नव माया । जय देवि, जय देवि० ॥१८

जयति त्रिकोण वसू-दल, पद्म द्वि-भूपुर मां, जय पद्म द्वि-भूपुर मां ।
तारिणि बीज त्रिकोणे, तारिणि बीज त्रिकोणे, मध्य महा द्युति मां । जय देवि, जय देवि०॥१९

पूरब-दल माया-पर, दक्षिण वाक-वरं, मां दक्षिण वाक-वरं ।
उत्तर हुँ फट् पश्चिम, उत्तर हुँ फट् पश्चिम, तारन तार तरं । जय देवि, जय देवि० ॥२०

त्वन्नाम-स्मरणं मम, जाड्य मनो हरणं, मां जाड्य मनो हरणं ।
पावन पुण्य पवित्रं, पावन पुण्य पवित्रं, ज्ञानार्णव-वरणं । जय देवि, जय देवि० ॥२१

नव-निधि-पर बहु सिधि-पर, शक्ति-परा पूर्णा, मां शक्ति-परा पूर्णा ।
निज जन 'मोति' उधारन, निज जन 'मोति' उधारन, वर कर शिर पूर्णा । जय देवि०॥२२
फुल्लेन्दीवर-लोचनि, फुल्लेन्दीवर-लोचनि, त्रि-नयनि, सुर-वरदा । जय देवि, जय देवि०॥२३

[१]

पञ्च-श्लोकी प्रातः-स्मरणम्

प्रातः स्मरामि भव-तारिणि ! तारिणीं त्वां, मन्द-स्मितां त्रि-नयनां घन - नील - वर्णाम् ।
कर्त्री - कपालोत्पल - खड्ग - धात्रीं, धात्रीं सुरासुर - नृणामखिलेश्वरीं च ।।१
प्रातः स्मरामि खर्वामपवर्ग - दात्रीमक्षोभ्य - शम्भु - सहितामहि - भूषणाढ्याम् ।
प्रत्यर्पितांघ्रि - शिव - वक्षसि सुप्रसन्नां, भक्तार्ति - भय - वारण - कर्म - दक्षाम् ।।२
प्रातः स्मरामि षट्कोण - त्रिकोण - गेहां, वस्वार - धरणी - गृह - शोभमानाम् ।
शक्रादि - सुर - संघ - सुसेव्यमानामानन्द - कन्दां पञ्चार्णवीं ताम् ।।३
प्रातर्नमामि नृ-करोटि - विशाल - मालां, हाला - विघूर्णित - तरां सुत्रिनेत्र - जालाम् ।
व्याघ्राम्बरावृत - कटी - तट - भासमानां, जाड्य-पहां त्वरित - सिद्धि - प्रदां परेशीम् ।।४
प्रातर्भजामि भव - ताप - विनाशिकाम्बां, सद्यस्समृद्धि - निधि - बुद्धि - प्रकाशिकां च ।
ज्वलच्चिता - मध्य - गतापि - घोरां, दंष्ट्रा - करालामपि भक्त - पालाम् ।।५

फल-श्रुति

यः श्लोक - पञ्चकमिदं पठति प्रभाते, तारां स्मरन् प्रति - दिनं भुवि भार - हाराम् ।
विद्या - विभूति - सुख - शान्ति- यशांस्यवाप्य, सोऽन्ते प्रयाति सालोक्य - पदं जनन्याः ।।

मैं प्रातः काल भव-सागर से तारनेवाली तारिणी मां का स्मरण करता हूँ, जो मुस्करा रही हैं, घने नील-वर्ण की हैं, हाथों में कैंचो, नर-कपाल, नील-कमल, खड्ग लिये हैं और जो देवों, राक्षसों, मनुष्यों की उत्पादिका हैं, विश्व की ईश्वरी हैं।

मैं प्रातःकाल मोक्ष-दायिनी, छोटे देहवाली तारा मां का स्मरण करता हूं, जो अपना दायाँ पैर शिव के वक्ष पर रखे प्रसन्न हैं, भक्तों के दुःख-भय दूर करने में दक्ष हैं और अक्षोभ्य शिव सहित सर्प को अभूषण-रूप में धारण किये हैं।

मैं प्रातःकाल त्रिकोण, षट्कोण, वृत्त, अष्ट-दल, भूपुर-मय यन्त्र में निवास करनेवाली मां तारा का स्मरण करता हूँ, जो इन्द्रादि देवों से सेविता हैं, सभी सुखों का मूल हैं और जिनका पञ्चाक्षरी मन्त्र है।

मैं प्रातःकाल मां तारा को नमन करता हूँ, जो नर-मुण्डों की भारी माला पहने हैं, जिनके त्रिनेत्र सुधा-पान से चञ्चल हैं, जो कटि में बाघाम्बर पहने हैं और जो भक्तों की बुद्धि की जड़ता को दूर कर शीघ्र ही सिद्धि देती हैं।

मैं प्रातःकाल मां तारा का मनन करता हूँ, जो सांसारिक कष्टों को नष्ट कर देती हैं, भक्तों को तुरन्त ज्ञान व समृद्धि देती हैं और उज्ज्वल चिता में रहती हैं तथा दीर्घ-दन्ता भयावनी होती हुई भी भक्तों की पालिका हैं।

फल-श्रुति—जो इन पाँच श्लोकों को भू-भार-हारिणी मां तारा का स्मरण करते हुये प्रातः पाठ करता है वह सभी विद्याओं, ऐश्वर्यों, सुख-शान्ति-यशादि को प्राप्त कर अन्त में मां के लोक को जाता है।

फा० १

[२]

श्री उग्र-तारा कवचम्

कैलास - शिखरारूढं देव-देवं जगद् - गुरुम् । पप्रच्छ पार्वती देवी साधकानुग्रहेच्छया ।।१
त्वत्-प्रसादान्महादेव ! भैरवेणोदितं पुरा । कवचं श्रोतुमिच्छामि तारिकाया मनोहरम् ।।२
श्रुत्वा नगात्मजा-वाक्यं विहस्य परमेश्वरः । महा-प्रीत्या परिष्वज्य साधु साध्विति वादयन् ।।३
शृणु तत्-कवचं देवि ! अज्ञानेन्धन-पावकं । यस्य स्मरण-मात्रेण तारिका सम्प्रसीदति ।।४
यामवाप्य महात्मानो धर्म-कामार्थ-मुक्तिषु । नासाध्यं मेनिरे किञ्चित् कवयः शुद्ध-बुद्धयः ।।५

विनियोग—अस्य श्रीउग्र-तारा-कवचस्य श्रीअक्षोभ्य ऋषिः, बृहती छन्दः, श्रीउग्र-तारा देवता, सर्व-कामार्थ-साधने पाठे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीअक्षोभ्य-ऋषये नमः शिरसि । बृहती-छन्दसे नमः मुखे । श्रीउग्रतारा-देवतायै नमः हृदि । सर्व-कामार्थ-साधने पाठे विनियोगाय नमः अञ्जलौ ।

प्रत्यालीढ - पदार्पितांघ्रि - शव - हृद् - घोराट्टहासा रवा,
खड्गेन्दीवर - कर्त्रि - खर्पर - भुजा हूंकार - वीजोद्भवा ।
खर्वा नील - विशाल - पिङ्गल - जटा - जूटोग्र - नागोज्ज्वला,
जाड्यं न्यस्य कपालके त्रि - जगतां हंत्युग्रतारा स्वयं ।।

संसार-तारिणी तारा पूर्वस्यां पातु मां सदा । प्रत्यालीढ-पदा घोरा तथाग्नेय्यां जगन्मयी ।।१
उग्र-तारा पातु याम्यां यम-भीति-विनाशिनी । नैऋत्यां चंडिका पातु मुण्ड-माला-विभूषिता ।।२
खर्वा लम्बोदरी भीमा व्याघ्र-चर्मावृता कटौ । एक-जटा सदा पातु पश्चिमे च हर-प्रिया ।।३
नव-यौवन-सम्पन्ना पञ्च-मुद्रा-विभूषिता । नील-सरस्वती पातु वायव्ये पुत्रिणी सदा ।।४
बालार्क-मण्डलाकार-लोचन-त्रय-भूषिता । कौबेर्य्यां च महा-तारा पातु नित्यं सुर-प्रिया ।।५
चतुर्भुजा ललज्जिह्वा भीम-रूपा महा-बला । भैरवी च तथा पातु ऐशान्यां दिशि मां सदा ।।६
खड्ग-कर्तृ-धरा सव्ये वामे चोत्पल-खर्परा । ऊर्ध्वे वागीश्वरी पातु द्रुत-बुद्धिकरी सदा ।।७
पिङ्गलोर्द्ध-जटा-मध्ये वासुकीषु नियोजिता । सावेश-स्मेर-वदना वस्त्रालंकार-भूषिता ।।८
मस्तकं पातु मे पद्मा श्वेत-पद्मान्तर-स्थिता । भालं मे पातु पद्मा च नासिकां रूप-धारिणी।।९

सुन्दरी पातु नेत्रे च सर्वानन्द-स्वरूपिणी । श्रवणे सर्वदा पातु कालिका मुण्ड-मालिनी ॥१०
श्मशान-भैरवी पातु स्कन्धं मे सर्वदैव हि । आनन्द-भैरवी बाहू पातु नित्यं सुर-प्रिया ॥११
हस्तौ रक्षतु शर्वाणी हृदयं पातु सर्वदा । मध्यं रक्षतु मातङ्गी नाभिं पातु सुरेश्वरी ॥१२
कटिं कामेश्वरी पातु भक्त-काम-प्रपूरिणी । भुवनेश्वरी सदा पातु ऊरू मे सर्व-मङ्गला ॥१३
महा-त्रिपुर-सुन्दरी च जानुनी पातु सर्वदा । अश्वारूढ़ा तथा जंघे प्रचण्डासुर-घातिनी ॥१४
भद्र-काली तथा पादौ पायाच्चाभद्र-हारिणी । सर्वत्र त्वरिता पातु सर्वत्र हित-कारिणी ॥१५
अग्रतः षोडशी पातु देवी त्रिपुर-सुन्दरी । पृष्ठतो मे गुह्य-काली नित्यं रक्षतु शोभना ॥१६
कृष्ण-देहा दक्ष-पार्श्वे नित्यं पातु सु-शोभना । वाम-पार्श्वे सदा पातु रक्त-वीज-विनाशिनी ॥१७

फल-श्रुति

इत्येतत् कवचं प्रोक्तं सर्व-कामार्थ-सिद्धिदम् । गोपनीयं सदा देवि! न कस्मैचित् प्रदर्शयेत् ॥१८
यः सकृच्छृणुयादेतत्-कवचं भैरवोदितम् । सर्वान् स लभते कामान् परत्र शिव-रूपता ॥१९
सकृद् यस्तु पठेन्नित्यं कवचं भैरवोदितम् । स च सर्वं यज्ञ-फलं लभते नात्र संशयः ॥२०
संग्रामे संजयेच्छत्रून् मातङ्गानिव केसरी । दहेत् तृणं यथा वह्निस्तथा शत्रून् दहेत् सदा ॥२१
न शस्त्राणि न चास्त्राणि शरीरे प्रभवन्ति हि । न तस्य जायते व्याधिर्न च दुःखं कदाचन॥२२
उच्चाटनाद्यास्ताः सर्वाः प्रसिद्ध्यन्ति च सिद्धयः । न च वैर-गतिस्तस्य भवेदन्यैरबाधितः॥२३
दीर्घायुः काम-भोगी च धनवानपि जायते । यो न्यसेत् कवचं देहे तस्य सम्यक् फलं शृणु ॥२४
जित-व्याधिः शतायुश्च रूपवानपि जायते । सर्व-रत्नौघ-सम्पूर्णो विद्यावानपि जायते ॥२५
नाग्निर्दहति तत्-कायं न चापः क्लेदयति च । न शोषयति तं वायुः क्रव्यादा नहि चैव हि ॥२६
शस्त्राणि नैव छिन्दन्ति न तापयति भास्करः । वेतालाश्च पिशाचाश्च राक्षसाश्च भयानकाः॥२७
सर्वे तस्य वशं यान्ति भूत-ग्रामाश्चतुर्विधाः । नित्यं पठति यो भक्त्या कवचं हर-निर्मितम्॥२८
धर्मार्थ-काम-मोक्षाश्च नित्यं तस्य कर-स्थिताः । अन्यस्य वरदः सोऽपि नित्यं भवति पंडितः॥२९
एष संजायतेऽव्याधिः कवचं ब्रह्म-वादिनः । वदेत् श्लोक-शतशो भवेत् स श्री-धरो नरः ॥३०
लिखितं यस्य गेहे तु कवचं भैरवोदितं । न तस्य दुर्गतिः काचिज्जायते नात्र संशयः ॥३१
ग्रहाश्च सर्वे तुष्यन्ति वशं गच्छन्ति भूमि-पाः । यद्-राज्ये कवचज्ञोऽस्ति जायन्ते तत्र ते त्रयः॥३२

॥ श्रीभैरवानन्दे शिव-पार्वती-सम्वादे महा-रहस्ये श्रीउग्र-तारा-कवचं सम्पूर्णम् ॥

हिन्दी-रूपान्तर

श्रीउग्र-तारा कवच

कैलास की चोटी पर बैठे जगद्गुरु महा-देव से पार्वती देवी ने साधकों पर अनुग्रह करने की इच्छा से पूछा—हे महादेव ! आपके प्रसाद से मैं भैरव द्वारा पूर्व-कथित तारा के मनोहर कवच को सुनना चाहती हूं।

गिरिजा की बात को सुनकर परमेश्वर ने विहँस कर कहा—हे देवि ! अज्ञान को नष्ट करने-वाले उस कवच को सुनो, जिसका स्मरण करने मात्र से तारा प्रसन्न होती हैं। उस कवच को पाकर शुद्ध-बुद्धि महात्मा विद्वान् लोग धर्म-काम-अर्थ-मोक्ष में से किसी को भी असाध्य नहीं मानते।

विनियोग—तारा के इस कवच के ऋषि अक्षोभ्य, छन्द वृहती, देवता श्रीउग्रतारा और सभी कामनाओं की सिद्धि के लिए इसके पाठ का विनियोग है।

ऋष्यादि-न्यास—शिर पर श्री अक्षोभ्य ऋषि को नमस्कार है। मुख में वृहती छन्द को नमस्कार है। हृदय में श्रीउग्रतारा देवता को नमस्कार है। अञ्जलि में सभी कामनाओं की सिद्धि के लिए पाठ के विनियोग को नमस्कार है।

ध्यान—दायाँ पैर पीछे और बायां पैर आगे शव के हृदय पर रखकर विराजमान उग्रतारा घोर अट्टहास शब्द कर रही हैं। खड्ग, कमल, कैंची और कपाल-पात्र क्रमश: अपने चारों हाथों में लिए हैं। खर्वा अर्थात् छोटे शरीरवाली हैं और पीले रंग की विशाल जटा नाग से विभूषित है। तीनों लोकों की जड़ता को कपाल में स्थापित कर वे स्वयं नष्ट कर देती हैं।

संसार-तारिणी तारा सदा पूर्व में मेरी रक्षा करें। दायां पैर पीछे बायां पैर आगे रखनेवाली जगन्मयी घोरा आग्नेय कोण में रक्षा करें (१)। यम के भय को नष्ट करनेवाली उग्रतारा दक्षिण में रक्षा करें। नैर्ऋत कोण में मुण्ड-माला से सज्जिता चण्डिका रक्षा करें (२)। छोटे शरीरवाली, लम्बोदरी, भीमा, कमर में व्याघ्र-चर्म पहने शिव-प्रिया एक-जटा सदा पश्चिम में रक्षा करें। नव-यौवना, पञ्च-मुद्रा-विभूषिता, पुत्रिणी नील-सरस्वती सदा वायव्य कोण में रक्षा करें (३-४)। बाल-सूर्य-मण्डल के समान आकारवाले तीन नेत्रों से शोभिता, देव-प्रिया महा-तारा नित्य उत्तर में रक्षा करें (५)। चतुर्भुजा, लल-ज्जिह्वा, भीम-रूपा, महा-बला भैरवी सदा ईशान कोण में मेरी रक्षा करें (६)। दाएँ हाथों में खड्ग और कैंची तथा बाएँ में कमल और कपाल-पात्र लिए, शीघ्र बुद्धि-दायिनी वागीश्वरी सदा ऊपर रक्षा करें (७)। पीली ऊर्ध्वजटा में वासुकी नाग को रखनेवाली, हँसमुखी व भूषणों से सुसज्जिता, श्वेत-पद्म के मध्य बैठी पद्मा मेरे मस्तक की और नासिका की रक्षा करें (८-९)। सर्वानन्द-स्वरूपिणी सुन्दरी नेत्रों की रक्षा करें (१०)। श्मशान-भैरवी सदा मेरे कन्धों की रक्षा करें। देव-प्रिया आनन्द-भैरवी भजाओं की रक्षा

करें (११)। दोनों हाथों और हृदय की रक्षा सदा शर्वाणी करें। मध्य भाग की रक्षा मातङ्गी और नाभि की रक्षा सुरेश्वरी करें (१२)। कमर की रक्षा भक्तों की इच्छा पूरी करनेवाली कामेश्वरी करें। सर्वमङ्गला भुवनेश्वरी मेरे उरुओं की रक्षा करें (१३)। महा-त्रिपुरसुन्दरी जानुओं की रक्षा सदा करें। प्रचण्ड असुर को मारनेवाली अश्वारूढ़ा जंघाओं की रक्षा करें (१४)। अशुभ को दूर करनेवाली भद्रकाली पैरों की रक्षा करें। हित-कारिणी त्वरिता सर्वत्र रक्षा करें (१५)। त्रिपुर-सुन्दरी षोडशी आगे रक्षा करें। सुन्दरी गुह्य-काली सदा पीछे मेरी रक्षा करें (१६)। सुन्दरी कृष्ण-वर्णा दाएँ पार्श्व की सदा रक्षा करें। बाएँ पार्श्व में सदा रक्त-बीज-नाशिनी रक्षा करें (१७)।

फल-श्रुति—सभी कामनाओं की सिद्धि देनेवाला यह कवच कहा गया है। हे देवि ! इसे सदा गुप्त रखना चाहिये, किसी को न बताये (१८)। भैरवोक्त इस कवच को जो एकबार सुनता है, वह सभी कामनाओं को पाकर अन्त में शिव-रूप होता है (१९)। जो नित्य एक बार भैरवोक्त कवच को पढ़ता है, वह सभी यज्ञों का फल पाता है, इसमें सन्देह नहीं (२०)। युद्ध में वह शत्रुओं को जीतता है, जैसे सिंह हाथी को जय करता है। जैसे अग्नि घास जला देती है, वैसे ही वह शत्रुओं को नष्ट करता है (२१)। शस्त्र और अस्त्र उसके शरीर पर प्रभाव नहीं डाल पाते। न कभी उसके रोग होता है, न दुःख (२२)। उच्चाटनादि सभी सिद्धियाँ उसे प्राप्त होती हैं, दूसरों की शत्रुता उसे बाधा नहीं पहुँचाती (२३)। दीर्घायु, धनवान और यथेच्छ भोगों का प्राप्त करनेवाला होता है। जो शरीर में कवच का न्यास करता है, उसका फल सुनो (२४)। रोगों को जीत कर शतायु और रूपवान् होता है। सभी रत्नों से युक्त होकर विद्वान् भी होता है (२५)। उसके शरीर को न अग्नि जलाती है, न जल गलाता है और न वायु सुखाती है। क्रव्याद उसका अनिष्ट नहीं करते (२६)। शस्त्र उसे छेदते नहीं, न सूर्य उसे तप्त करता है। भयानक वेताल, पिशाच, राक्षस और चारों द्वार के प्राणी उसके वश में रहते हैं, जो भक्ति से शिव-निर्मित कवच को पढ़ता है (२७-२८)। धर्मार्थ-काम-मोक्ष सदा उसके हाथ में रहते हैं। वह सदा दूसरों को वर देनेवाला पण्डित हो जाता है (२९)। ब्रह्म-वादियों को यह कवच व्याधि-रहित रखता है और वह सैकड़ों श्लोक कहनेवाला लक्ष्मीवान् मनुष्य होता है (३०)। जिसके घर में यह भैरवोक्त कवच लिखा रहता है, उसकी कभी दुर्दशा नहीं होती, इसमें सन्देह नहीं (३१)। सभी ग्रह उससे प्रसन्न रहते हैं और शासक उसके अधीन रहते हैं। जिस राज्य में इस कवच का ज्ञाता रहता है, वहाँ तीनों देव रहते हैं (३२)।

[३]

श्रीतारा-गुह्य-कवचम्

पुरा कैलास-शिखरे तारां पप्रच्छ शंकरः । केनोपायेन सहसा शरीरं सुदृढं भवेत् ।। १
कथं वा सिद्धिरतुला तव मन्त्र-वतां प्रिये ! अति गुह्यतरं वाक्यं निःसृतं मुख-पंकजात् ।। २

श्री तारोवाच—

अथ वक्ष्यामहे देव्यास्तारायाः कवचं शुभम्, न सिध्यति विना येन तारा-मन्त्रः कदापि हि ।। ३
इदं रहस्यं परमं कथयामि त्वयि प्रभो ! श्रूयतां परमं गुह्यं कवचं मन्मुखोदितम् ।। ४
मधु-कैटभयोर्युद्धे कथितं पद्म-योनिना । त्वत्-प्रसादात् त्रि-देवेश! लयं विष्णुर्न इच्छति ।। ५
भवत्-सुकथितं सर्वं तन्न स्मरसि मायया । कवचं सार-भूतानामुद्धृतं योगिनी-मतम् ।। ६
न कस्यचित् प्रवक्तव्यं न प्रकाश्यं कथञ्चन, शपथं कुरु मे नाथ! यदि स्नेहोऽस्ति मां प्रति ।। ७
श्रूयतां सावधानेन लिखितं सार-विग्रहे । सत्यं सत्यं पुनः सत्यं सत्यं सत्यं पुनः पुनः ।। ८
कवचेन बिना देव! यो मामर्चयति क्षणं । तमश्नाति महोग्रा सा योगिनीभिः सुनिश्चितं ।। ९
त्रीं स्त्रीं हूं फट् चैक-जटा-तारा मां पातु सर्वतः । ब्रह्म-विष्णु-महेशानां वीजं रक्षतु मूलकं ।। १०
तदेव शक्ति-वीजं तु लिङ्गं रक्षतु यत्नतः । मणिपूरं सदा पातु वधू-वीजं अशेषतः ।। ११
अनाहतं कूर्च-वीजं पातु मे सर्व-सर्वतः । अस्त्रं तु सर्वदा पातु विशुद्धं कण्ठ-भूषणं ।। १२
शेषं तु पातु मे नित्यमाज्ञा-स्थानं द्वि-पत्रकं, शीर्षं पातु सदा तारैक-जटा पातु मे मुखं ।। १३
नीला सरस्वती पातु हृदयं मे समन्ततः, मूलाधारं सदा पातु फट्-शक्तिर्महा-नील-सरस्वती ।। १४
अक्षोभ्यः पातु सर्वाङ्गं वृहती पातु भालकं । उग्र-तारा देवता मे गह्वरं पातु सर्वदा ।। १५
चरणौ मे सदा पातु हूं वीजं तदशेषतः । स्तन-द्वयं सदा पातु फट्-शक्तिर्विघ्न-घातिका ।। १६
रसनां मे सदा पातु लक्ष्मी-देवी च शाश्वती । रसनाग्रं सदा पातु सरस्वती प्रयत्नतः ।। १७
रतिः पातु सदा वीजं प्रीतिर्मे वदनं सदा । कीर्तिः कृत्तिं सदा पातु शांतिः शांतिं सदावतु ।। १८
पुष्टिर्मे पातु पुष्टिं च तुष्टिस्तुष्टिं सदावतु । वैरोचनः सदा पातु शङ्ख-पूर्वस्तथैव च ।। १९
पाण्डुरो मे सदा गण्डं पातु नित्यं च सर्वतः । पद्म-नाभः सदा पातु नाभिं मे दश-पत्रिकां ।। २०
असिताङ्गः पातु मे लिङ्गं नामकः पातु कर्णकं, मामकः मे सदा हस्तौ पाण्डुरः पातु कण्ठकं ।। २१
तारकः पातु सततमष्टाङ्गं परमेश्वरः । इतीदं कवचं देव! कथितं मन्मुखात् सृतं ।। २२

फल-श्रुति

प्रमादाद् यदि देवेश! यत्र कुत्र प्रकाश्यते, योगिनीभिः सदाहं च स्वयं हि वध-कारिणी ।। २३
यदि भाग्य-वशाल्लब्धं केनापि साधकेन च । तदा तस्य महा-सिद्धिर्वपुषो जायते ध्रुवं ।। २४

निषिद्धेभ्यो न दातव्यं न प्रकाश्यं कथञ्चन, यदि दद्यात् निषिद्धेभ्यस्तदा मृत्युमवाप्नुयात् ॥ २५
दद्याच्छान्ताय शिष्याय तन्त्र-मन्त्र-युताय च । गुरु-भक्तियुतायैव तदा सिद्धिरनुत्तमा ॥ २६
रहस्यं कथितं सर्वमनन्त-फलमाप्नुयात् । गोपितव्यं सदा देव ! न प्रकाश्यं कदाचन ॥ २७

॥ श्री भैरव-भैरवी-सम्वादे श्रीतारोक्त-तारा-कवचम् सम्पूर्णम् ॥

हिन्दी-रूपान्तर

श्रीतारा-कवच

प्राचीन काल में कैलास की चोटी पर भगवान् शङ्कर ने भगवती तारा से पूछा कि किस उपाय से शरीर सुदृढ़ होता है और तुम्हारे मन्त्र से दीक्षित व्यक्ति को अनुपम सिद्धि कैसे मिलती है ?

श्रीतारा ने कहा कि मैं शुभ कवच को बताऊँगी, जिसके बिना मेरा मन्त्र कदापि सिद्ध नहीं होता। यह परम रहस्य और गुप्त कवच है, जो मेरे द्वारा कहा गया है। मधु-कैटभ के युद्ध में ब्रह्मा जी ने इसे कहा था। तुम्हारे प्रसाद से भगवान् विष्णु लय की इच्छा नहीं करते। तुमने इसे भले प्रकार कहा था किन्तु माया-वश स्मरण नहीं करते हो। यह कवच योगिनी-सम्मत सार-भूत है। न किसी को बताना चाहिये, न प्रकट करना चाहिये। यदि मुझमें तुम्हें स्नेह है, तो प्रतिज्ञा करें। सावधानी से सुनें, सार-विग्रह में लिखा है। इस कवच के बिना जो मेरा अर्चन करता है, उसे अति उग्र योगिनियाँ खा जाती हैं।

'त्रीं स्त्रीं हूं फट्' एकजटा तारा मेरी रक्षा सब ओर से करे। ब्रह्मा-विष्णु-महेश का बीज (ॐ) मूलाधार की रक्षा करे। शक्ति-बीज लिङ्ग को रक्षा करे। वधू-बीज (स्त्रीं) सदा मणिपुर की रक्षा करे। कूर्च-बीज (हूं) मेरे अनाहत चक्र की रक्षा करे। अस्त्र (फट्) कण्ठ-भूषण विशुद्ध की रक्षा करे। शेष (अक्षोभ्य-बीज–'आं') मेरे द्वि-दल आज्ञा-चक्र की रक्षा करे। तारा सदा मेरे शीर्ष की और एकजटा मेरे मुख की रक्षा करें। नील-सरस्वती मेरे हृदय की रक्षा करें। मूलाधार की रक्षा सदा फट्-शक्ति महा-नील-सरस्वती करें। अक्षोभ्य सारे शरीर की और वृहती छन्द मस्तक की रक्षा करें। उग्रतारा देवी मेरे गुह्य स्थान की सदा रक्षा करें। 'हूं' बीज मेरे दोनों पैरों की रक्षा करे। विघ्न-नाशिका फट्-शक्ति दोनों स्तनों को रक्षा करे। लक्ष्मी ❀ देवी मेरी जीभ की रक्षा करें। जीभ के अग्रभाग की रक्षा सदा सरस्वती करें। रति बीज की, प्रीति मुख-मण्डल को, कीर्ति कृति की और शान्ति सदा मेरी शान्ति की रक्षा करें। पुष्टि पोषण की और तुष्टि तोषण की सदा रक्षा करे। वैरोचन • और शङ्ख-पाण्डुर सदा मेरे गण्ड-स्थल (कनपटी) की रक्षा करें। पद्म-नाभ दश-दलवाली मेरी नाभि की रक्षा करें। असिताङ्ग मेरे लिङ्ग को और नामक मेरे कान की रक्षा करें। मामक मेरे हाथों को और पाण्डुर कण्ठ की रक्षा करें। परमेश्वर तारक मेरे आठों अङ्गों की रक्षा करें।

फल-श्रुति –इस कवच को प्रमाद-वश प्रकाश करने से मैं योगिनियों द्वारा बध करवाती हूं। यदि भाग्यवश कोई साधक इसे प्राप्त कर लेता है, तो वह महा-सिद्ध-शरीरवाला होता है। निषिद्ध लोगों को इसे न दे, देने से मृत्यु होती है। शान्त और तन्त्र-मन्त्र से युक्त, गुरु-भक्त शिष्य को इसे दे, तो उत्तम सिद्धि मिलती है। सारा रहस्य इसमें कहा गया है, जिससे अनन्त फल मिलता है। इसे सदा गुप्त रखे।

❀ आठ पीठ-शक्तियां—१ लक्ष्मी, २ सरस्वती, ३ रति, ४ प्रीति, ५ कीर्ति, ६ शान्ति, ७ पुष्टि, ८ तुष्टि।
• अष्ट-नाग—१ वैरोचन, २ शङ्ख-पाण्डुर, ३ पद्म-नाभ, ४ असिताङ्ग, ५ नामक, ६ मामक, ७ पाण्डुर, ८ तारक।

[४]

श्रीतारा-दिव्य-कवचम्

ईश्वर उवाच—

कोटि-तन्त्रेषु गोप्या हि विद्याति-भय-मोचिनी। दिव्यं हि कवचं तस्याः शृणुष्व सर्व-कामदं ॥

विनियोग—अस्य श्रीतारा-दिव्य-कवचस्य श्रीअक्षोभ्य ऋषिः, त्रिष्टुप् छन्दः, भगवती श्रीतारा देवता, सर्व-मन्त्र-सिद्धि-समृद्धये पाठे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीं अक्षोभ्य-ऋषये नमः शिरसि। त्रिष्टुप्-छन्दसे नमः मुखे। भगवती-श्रीतारा-देवतायै नमः हृदि। सर्व-मन्त्रा-सिद्धि-समृद्धये पाठे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

प्रणवो मे शिरः पातु ब्रह्म-रूपा महेश्वरी। ह्लींकारः ललाटे पातु बीज-रूपा महेश्वरी ॥
स्त्रींकारः पातु वदने लज्जा-रूपा महेश्वरी। हूंकारः पातु हृदये भवानी-शक्ति-रूप-धृक् ॥
फट्कारः पातु सर्वाङ्गे सर्व-सिद्धि-फल-प्रदा। खर्वा मां पातु देवेशी भ्रू-मध्ये सर्व-सिद्धिदा ॥
नीला मां पातु देवेशी गण्ड-युग्मे भयापहा। लम्बोदरी सदा पातु कर्ण-युग्मे महेश्वरी ॥
व्याघ्र-चर्मावृता स्कन्धौ पातु देवी शिव-प्रिया। पीनोन्नत-स्तनी पातु पार्श्व-युग्मे महेश्वरी ॥
रक्त-वर्तुल-नेत्रा च कटि-देशे सदाऽवतु। ललज्जिह्वा सदा पातु नाभौ मां भुवनेश्वरी ॥
करालास्या सदा पातु लिङ्गे देवी हर-प्रिया। पिङ्गोग्रैक-जटा पातु जंघायां विघ्न-नाशिनी ॥
खड्ग-हस्ता महा-देवी जानु-चक्रे महेश्वरी। नील-वर्णा सदा पातु जानुनी सर्वदा मम ॥
नाग-कुण्डल-धर्त्री च पातु पाद-युगे ततः। नाग-हार-धरा देवी सर्वाङ्गं पातु सर्वदा ॥
नाग-कङ्क-धरा देवी पातु प्रान्तर-देशतः। चतुर्भुजा सदा पातु गमने शत्रु-नाशिनी ॥
खड्ग-हस्ता महा-देवी श्रवणे पातु सर्वदा। नीलाम्बर-धरा देवी पातु मां विघ्न-नाशिनी ॥
कर्त्रि-हस्ता सदा पातु विवादे शत्रु-मध्यतः। ब्रह्म-रूप-धरा देवी संग्रामे पातु सर्वदा ॥
नाग-कङ्कण-धर्त्री च भोजने पातु सर्वदा। शव-कर्णा महा-देवी शयने पातु सर्वदा ॥
वीरासन-धरा देवी निद्रायां पातु सर्वदा। धनुर्बाण-धरा देवी पातु मां विघ्न-संकुले ॥
नागाञ्चित-कटी पातु देवी मां सर्व-कर्मसु। छिन्न-मुण्ड-धरा देवी कानने पातु सर्वदा ॥

चिता-मध्य-स्थिता देवी मारणे पातु सर्वदा । द्वीपि-चर्म-धरा देवी पुत्र-दार-धनादिषु ॥
अलङ्कारान्विता देवी पातु मां हर-वल्लभा । रक्ष रक्ष नदी-कुंजे हूं हूं फट् सु-समन्विते ॥
बीज - रूपा महा - देवी पर्वते पातु सर्वदा । मणिभृद्-वज्रिणी-देवि महा - प्रतिसरे तथा ॥
रक्ष रक्ष सदा हूं हूं ॐ ह्रीं स्वाहा महेश्वरी । पुष्पकेतु - राजार्हेते कानने पातु सर्वदा ॥
ॐ ह्रीं वज्र-पुष्पं हुं फट् प्रान्तरे सर्व-कामदा । ॐ पुष्पे पुष्पे महा-पुष्पे पातु पुत्रान् महेश्वरी ॥
हूं स्वाहा-शक्ति-संयुक्ता दारान् रक्षतु सर्वदा । आं हूं स्वाहा महेशानी पातु द्यूते हर-प्रिये ॥
ह्रीं सर्व-विघ्नोत्सारिणी देवी विघ्नान् सदाऽवतु, ॐ पवित्र-वज्र-भूमे हुँ फट् स्वाहा-समन्विता ॥
पूरिका पातु मां देवी सर्व-विघ्न-विनाशिनी । ॐ आः सुरेखे वज्र-रेखे हुं फट् स्वाहा-संयुता ॥
पाताले पातु सा देवी लाकिनी-नाम-संज्ञिका । ह्रींकारी पातु पूर्वे मां शक्ति-रूपा महेश्वरी ॥
स्त्रींकारी दक्षिणे पातु वधू-रूपा महेश्वरी । हूं स्वरूपा महा-देवी पातु मां क्रोध-रूपिणी ॥
फट्-स्वरूपा महा-माया उत्तरे पातु सर्वदा । पश्चिमे पातु मां देवी फट्-स्वरूपा हर-प्रिया ॥
मध्ये मां पातु देवेशी हूं-स्वरूपा नगात्मजा । नील-वर्णा सदा पातु सर्वतो वाग्भवा सदा ॥
तारिणी पातु भवने सर्वैश्वर्य - प्रदायिनी । विद्या-दान-रता देवी वक्त्रे नील-सरस्वती ॥
शास्त्रे वादे च संग्रामे जले च विषमे गिरौ । भीम-रूपा सदा पातु श्मशाने भय-नाशिनी ॥
भूत-प्रेतालये घोरे दुर्गे मां भीषणाऽवतु । पातु नित्यं महेशानी सर्वत्र शिव-दूतिका ॥

फल-श्रुति

कवचस्य च माहात्म्यं नाहं वर्ष-शतैरपि । शक्नोमि गदितुं देवि ! भवेत्तस्य फलं च यत् ॥
पुत्र-दारेषु बन्धूनां सर्व-देशे च सर्वदा । न विद्यते भयं तस्य नृप-पूज्यो भवेच्च सः ॥
शुचिर्भूत्वाऽशुचिर्वापि कवचं सर्व-कामदम् । प्रपठन् वा स्मरन् मर्त्यो दुःख-शोक-विवर्जिता ॥
सर्व-शास्त्रे महेशानि! कविराड् भवति ध्रुवं । सर्व-वागीश्वरो मर्त्यो लोक-वश्यो धनेश्वरः ॥
रणे द्यूते विवादे च जयस्तस्य भवेद् ध्रुवम् । पुत्र-पौत्रान्वितो मर्त्यो विलासी सर्व-योषितां ॥
शत्रवो दासतां यान्ति सर्वेषां वल्लभः सदा । गर्वी खर्वी भवत्येव वादी स्खलति दर्शनात् ॥
मृत्युश्च वश्यतां याति दासस्तस्यावनीश्वरः । प्रसङ्गात् कथितं सर्वं कवचं सर्व-कामदं ॥
प्रपठन् वा स्मरन् मर्त्यः शापानुग्रहणे क्षमः । आनन्द-वृन्द-सिन्धूनामधिपः कवि-राड् भवेत् ॥
सर्व-वागीश्वरो मर्त्यो लोक-वश्यः सदा सुखी । गुरोः प्रसादमासाद्य विद्यां प्राप्य सु-गोपितां ॥

फा० २

तत्रापि कवचं देवि ! दुर्लभं भुवनं त्रयं । गुरुर्देवो हरः साक्षात् तत् पत्नी तु हर-प्रिया ॥
अभेदेन भजेद् यस्तु सिद्धिरदूरतः । मन्त्राचारा महेशानि ! कथिताः पूर्ववत् प्रिये !
नाभौ ज्योतिस्तथा रक्तं हृदयोपरि चिन्तयेत् । ऐश्वर्यं सु-कवित्वं च महायोगीश्वरो नृपः ॥
नित्यं तस्य महेशानि! महिला-सङ्गमं चरेत् । पञ्चाचार-रतो मर्त्यः सिद्धो भवति नान्यथा ॥
शक्ति-युक्तो भवेन्मर्त्यः सिद्धो भवति नान्यथा । ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च ये देवासुर-मानुषाः ॥
तं दृष्ट्वा साधकं देवि! लज्जा-युक्ता भवन्ति ते । स्वर्गे मर्त्ये च पाताले ये देवा सिद्धि-दायकाः ॥
प्रशंसति सदा देवि! तं दृष्ट्वा साधकोत्तमं । विघ्नात्मकाश्च ये देवाः स्वर्गे मर्त्ये रसातले ॥
प्रशंसन्ति सदा सर्वे तं दृष्ट्वा साधकोत्तमं । इति ते कथितं देवि ! मया सम्प्रकीर्तितं ॥
भुक्ति-मुक्ति-करं साक्षात् कल्पवृक्ष-स्वरूपकं । आसाद्याद्य-गुरुं प्रसाद्य य इदं कल्पद्रुमालम्बनं ॥
मोहेनापि मदेन चापि रहितो जाड्येन वा । सिद्धोऽसौ भुवि सर्व-दुःखान् पारं प्रयात्यंतके ॥
मित्रं तस्य नृपाश्चापदो नश्यन्ति तस्याशु च । तद्-गात्रं प्राप्य शस्त्राणि ब्रह्मास्त्रादीनि वै भुवि ॥
तस्य गेहे स्थिरा लक्ष्मीर्वाणी वक्त्रे वसेद् ध्रुवं । लिखित्वा धारयेद् यस्तु कण्ठे वा मस्तके भुजे ॥
तस्य सर्वार्थ-सिद्धिः स्याद् यद्यन्मनसि वर्तते । गोरोचना - कुंकुमेन रक्त - चन्दनकेन वा ॥
यावकैर्वा महेशानि ! लिखेन्मन्त्रं समाहितः । अष्टम्यां मङ्गल-दिने चतुर्दश्यामथापि वा ॥
सन्ध्यायां देव-देवेशि! लिखेद् यन्त्रं समाहितः । मघायां श्रवणे वापि रेवत्यां वा विशेषतः ॥
सिंह-राशौ गते चन्द्रे कर्कटस्थे दिवाकरे । मीन-राशौ गुरौ याते वृश्चिकस्थे शनैश्चरे ॥
लिखित्वा धारयेद् यस्तु उत्तराभिमुखो भवेत् । श्मशाने प्रान्तरे वापि शून्यागारे विशेषतः ॥
निशायां वा लिखेन्मन्त्रं तस्य सिद्धिरचञ्चला । भूर्ज-पत्रे लिखेन्मन्त्रं गुरुणा च महेश्वरि !
ध्यान-धारण-योगेन धारयेद् यस्तु भक्तितः । अचिरात् तस्य सिद्धिः स्यान्नात्र कार्या विचारणा ॥

॥ श्रीरुद्रयामले तन्त्रे श्रीउग्रतारा दिव्य-कवचम् सम्पूर्णम् ॥

हिन्दी-रूपान्तर

श्रीतारा-दिव्य-कवच

ईश्वर ने कहा—करोड़ों तन्त्रों में भारी भय से छुड़ानेवाली देवी तारा गोपनीय हैं। उनके दिव्य कवच को सुनो, जो सभी कामनाओं को देनेवाला है।

विनियोग—श्रीतारा के इस दिव्य कवच के ऋषि श्री अक्षोभ्य, छन्द त्रिष्टुप्, देवता भगवती श्रीतारा और विनियोग सब मन्त्रों की सिद्धि-समृद्धि के लिये पाठ करने में है।

ऋष्यादि-न्यास—शिर में श्री अक्षोभ्य ऋषि को नमस्कार, मुख में त्रिष्टुप् छन्द को नमस्कार, हृदय में श्री भगवती तारा को नमस्कार और अञ्जलि में सब मन्त्रों की सिद्धि-समृद्धि के लिये पाठ के विनियोग को नमस्कार।

'ॐ' ब्रह्म-रूपा महेश्वरी मेरे शिर की रक्षा करे। 'ह्रीं'-बीज-रूपा महेश्वरी ललाट में रक्षा करे। 'स्त्रीं'-लज्जा-रूपा महेश्वरी मुख में रक्षा करे। 'हूं' शक्ति-रूपा भवानी हृदय में रक्षा करे। सर्व-सिद्धि-फल-प्रदा 'फट्' सभी अङ्गों में रक्षा करे। सर्व-सिद्धिदा देवेशी खर्वा मेरे भ्रू-मध्य में रक्षा करे। भय को दूर करनेवाली देवेशी नीला मेरे दोनों गण्डों (कनपटियों) में रक्षा करे। लम्बोदरी महेश्वरी सदा दोनों कानों में रक्षा करे। व्याघ्र-चर्म पहने शिव-प्रिया देवी कन्धों में रक्षा करे। पीनोन्नत-स्तना महेश्वरी दोनों बगलों में रक्षा करे। लाल गोल नेत्रोंवाली देवी सदा कटि में रक्षा करे। ललज्जिह्वा भुवनेश्वरी सदा नाभि में मेरी रक्षा करे। भयानक मुखवाली हर-प्रिया देवी लिङ्ग में सदा रक्षा करे। पीली और उग्र एक-जटा विघ्न-नाशिनी जांघ में रक्षा करे। खड्ग-हस्ता महेश्वरी जानु-चक्र में और नील-वर्णा दोनों जानु में सदा मेरी रक्षा करे। नाग-कुण्डल धारण करनेवाली देवी दोनों पैरों की रक्षा करे। नाग-हार पहने देवी सदा सारे अङ्गों की रक्षा करे। नाग-कङ्कन धारण करनेवाली देवी प्रान्तर-देश में रक्षा करे। चतुर्भुजा शत्रु-नाशिनी देवी सदा चलते समय रक्षा करे। खड्ग-हस्ता महा-देवी सदा सुनने में रक्षा करे। नील-वस्त्र-धारणी विघ्न-नाशिनी देवी मेरी रक्षा करे। कैंची हाथ में रखनेवाली सदा शत्रुओं के बीच विवाद में रक्षा करे। ब्रह्म-रूप-धरा देवी संग्राम में सदा रक्षा करे। नाग-कङ्कन-धारिणी भोजन में सदा रक्षा करे। शव-कर्णा महा-देवी शयन-काल में सदा रक्षा करे। वीरासना देवी निद्रा-काल में सदा रक्षा करे। धनुर्बाण-धरा देवी विघ्नों में मेरी रक्षा करे। कमर में सर्प-करधनी पहने देवी सभी कर्मों में मेरी रक्षा करे। छिन्न-मुण्ड धारण करनेवाली देवी वन में सदा रक्षा करे। चिता के मध्य में रहनेवाली देवी सदा मारण-कर्म में रक्षा करे। गज-चर्म-धारिणी देवी पुत्र-स्त्री धनादि विषयों में और आभूषण पहने हर-वल्लभा देवी 'रक्ष रक्ष हूं हूं फट्' से युक्त होकर नदी-कुञ्ज में रक्षा करे। बीज-रूपा महा-देवी सदा पर्वत में रक्षा करे। 'मणि-भृद्-वज्रिणी-देवि महा-प्रतिसरे रक्ष रक्ष हूं हूं ॐ ह्रीं स्वाहा' 'पुष्पकेतु-राजार्हा' महेश्वरी कानन में रक्षा करे। 'ॐ ह्रीं वज्र-पुष्पं हुं फट्' सर्व-कामदा प्रान्तर में रक्षा करे। 'ॐ पुष्पे पुष्पे महा-पुष्पे' महेश्वरी पुत्रों की रक्षा करे। 'हूं स्वाहा' शक्ति से युक्ता देवी सदा स्त्रियों की रक्षा करे। 'आं हूं स्वाहा' महेशानी द्यूत (जुएँ) में रक्षा करे। 'ह्रीं' सर्व-विघ्नोत्सारिणी देवी विघ्नों से रक्षा करे। 'ॐ पवित्र-वज्र-भूमे हुं फट् स्वाहा' से युक्त विघ्न-नाशिका पूरिका देवी मेरी रक्षा करे। 'ॐ आः सुरेखे वज्र-रेखे हुं फट् स्वाहा' से युक्त लाकिनी-नामवाली देवी पाताल में रक्षा करे। 'ह्रीं' शक्ति-रूपा महेश्वरी पूर्व में

रक्षा करे। 'स्त्रीं' वधू-रूपा महेश्वरी दक्षिण में रक्षा करे। 'हूं' क्रोध-रूपिणी महा-देवी मेरी रक्षा करे। 'फट्'-स्वरूपा महा-माया सदा उत्तर में रक्षा करे। 'फट्'-स्वरूपा हर-प्रिया देवी पश्चिम में मेरी रक्षा करे। 'हूं'-स्वरूपा नगात्मजा देवेशी मध्य में मेरी रक्षा करे। नील-वर्णा वाग्भवा सदा सब ओर रक्षा करे। सब ऐश्वर्य देनेवाली तारिणी भवन में रक्षा करे। विद्या देने में तत्पर नील-सरस्वती देवी मुख में, शास्त्रार्थ में, संग्राम में, जल में और कठिन पर्वत में रक्षा करे। भय-नाशिनी भीम-रूपा सदा श्मशान में और भीषणा देवी भूत-प्रेत-मय भयानक दुर्ग में रक्षा करे। शिव-दूतिका सर्वत्र नित्य रक्षा करे।

फल-श्रुति

इस कवच की महिमा सौ वर्षों में भी कहने में मैं समर्थ नहीं हूं। इसके पाठ-कर्ता के पुत्रों, स्त्रियों, बन्धुओं को किसी देश में कभी भय नहीं होता। शासक उसे पूज्य मानते हैं। पवित्र या अपवित्र दशा में भी यह कवच सब कामनाओं को पूरा करता है। इसके पढ़ने या स्मरण करनेवाला मनुष्य दुःखों से छूट जाता है। वह सब शास्त्रों का ज्ञाता होता है। वाक्-पटु होकर संसार को वशीभूत करता है, धनी होता है। रण, द्यूत, वाद-विवाद में निश्चय जय पाता है। पुत्र-पौत्रों से युक्त हो सभी भोगों को भोगता है। शत्रु दास हो जाते हैं और वह सदा सबका प्रिय होता है। घमण्डी उसके आगे झुक जाते हैं, वाद-विवाद करनेवाले दर्शन मात्र से चुप हो जाते हैं। मृत्यु उसके वश में होती है और भूस्वामी उसकी सेवा करते हैं।

प्रसङ्गवश सब बातें बता दी हैं कि यह कवच सब कामनाओं को पूरा करनेवाला है। इसका पाठ या स्मरण करनेवाला शाप और अनुग्रह दोनों में समर्थ होता है। आनन्द-मय रहता हुआ वह कवि-सम्राट् होता है। वाक्-सिद्ध होकर संसार को वश में रखता है और सदा सुखी रहता है। गुरु की कृपा से सुगोप्य विद्या और दुर्लभ कवच को प्राप्त करे क्योंकि गुरुदेव साक्षात् शिव हैं और उनकी पत्नी हर-प्रिया। अभेद-भाव से भजन करे, तो सिद्धि शीघ्र मिलती है। मन्त्र-सम्वन्धी आचार पूर्ववत् ही हैं। नाभि में ज्योति और हृदय के ऊपर रक्त-वर्ण ध्यान करे। इससे ऐश्वर्य, कवित्व-शक्ति और वागीशत्व उसे नित्य प्राप्त होता है। पञ्चतत्वों में तत्पर और शक्ति-युक्त मनुष्य ही सिद्ध होता है, अन्यथा नहीं। ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र और समस्त देवासुर, मनुष्यादि ऐसे मनुष्य को देखकर लज्जित हो उठते हैं। स्वर्ग, मृत्युलोक और पाताल में जो देव सिद्धि देते हैं तथा जो विघ्न-कारक हैं, वे सभी उसकी प्रशंसा करते हैं।

हे देवि ! यह भुक्ति-मुक्ति-दायक साक्षात् कल्पवृक्ष-स्वरूप कवच मैंने तुमसे कहा। आदि-गुरु के पास पहुँचकर उन्हें प्रसन्न कर जो इस कल्पद्रुम-समान साधन को मद-मोह से रहित हो अपनाता है, वह पृथ्वी पर सिद्ध होकर सब दुःखों को पार कर जाता है। राजा उसके मित्र होते हैं, उसकी विपदाएँ शीघ्र ही नष्ट हो जाती हैं। ब्रह्मास्त्रादि और सभी शस्त्र उसके शरीर तक पहुँचकर नष्ट हो जाते हैं। उसके घर में लक्ष्मी स्थिर होकर रहती है और मुख में सरस्वती निश्चय ही वास करती है।

इसे लिखकर जो कण्ठ, मस्तक या भुजा में धारण करता है, उसके मन के सभी अभीष्ट सिद्ध होते हैं। गोरोचन, कुंकुम, रक्त चन्दन या महावर से मन्त्र को लिखे। अष्टमी को मङ्गल के दिन या चतुर्दशी में सन्ध्या-समय यन्त्र लिखे। मघा, श्रवण या रेवती-नक्षत्र के समय, सिंह राशि में चन्द्रमा के जाने पर या कर्कटस्थ रवि के समय, मीन राशि में गुरु के होने पर, वृश्चिक राशि में शनि के होने पर उत्तराभिमुख होकर लिखे और धारण करे। श्मशान, प्रान्तर (सूने मार्ग) या शून्य गृह में निशा-काल में मन्त्र लिखने से अचल सिद्धि मिलती है। भूर्ज-पत्र पर लिखे या गुरु से लिखवाये। ध्यान-धारणा के साथ भक्ति के साथ धारण करे तो शीघ्र सिद्धि मिलती हैं, इसमें सन्देह नहीं।

[५]

श्रीतारा-त्रैलोक्य-विजय-कवचम्

श्रीभैरव उवाच—

इत्थमभ्यर्थितः श्रीमान् शङ्करः प्रियया प्रभुः । कृपया कवचं प्राह चतुर्वर्ग-फल-प्रदम् ॥

श्रीमहादेव उवाच—

अस्ति गुह्यं महा-देवि! कवचं ब्रह्म-सम्मितम् । तारिण्या ब्रह्म-रूपिण्या उग्रापत्-तारणं नृणां ॥
त्रैलोक्य-विजयं नाम कवचं मन्त्र-विग्रहं । सर्व-शक्ति-मयं देवि ! सर्वारिष्ट-विमर्दकम् ॥

विनियोग—ॐ त्रैलोक्य-विजय-कवचस्यास्य श्रीअक्षोभ्य ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीतारिणी देवता, ह्रीं बीजं, त्रीं शक्तिः, हूं कीलकं, अमुक-विजय-कामे पाठे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीअक्षोभ्य-ऋषये नमः शिरसि । अनुष्टुप्-छन्दसे नमः मुखे । श्रीतारिणी-देवतायै नमः हृदि । ह्रीं-बीजाय नमः गुह्ये । त्रीं-शक्तये नमः नाभौ । हूं-कीलकाय नमः पादयोः । अमुक-विजय-कामे पाठे विनियोगाय नमः अञ्जलौ ।

ब्रह्म-विष्णु-महेशाद्यास्त्रिदशाः सर्व-सिद्धयः । माहेश्वरी-भयङ्कर्यौ नारसिंही तथैव च ॥
कुल्लुकाः स्युर्महोग्रायाः सर्व-तन्त्रेषु गोपिता । वासुदेवो हरो ब्रह्मा तारिणी प्रकृतिः सदा ॥
एक-मूर्तिः सदा चिन्त्या एक-मूर्तिस्तु संस्थिता । तां च श्रीमूर्तिर्मूर्धाधः संयोज्य मध्य-देशतः ॥
कुल्लुका त्रिविधा चर्या प्रत्येकं त्र्यक्षरी सदा । माहेश्वरीति विख्याता श्रीमत्कुल्लुक-तारिणी ॥
ऊर्ध्वं रक्षतु सा नित्यं चतुर्वर्ग-फलाप्तये । महा-मेघ-प्रभां श्यामां कला-बाहु-समन्विताम् ॥
खड्-कर्त्रि-धरां पीत-वस्त्रां शवासनां स्मरेत् । प्रणवं भुवनेशानीमनन्ताद्यं शिवं तथा ॥
बिन्दु-नाद-समायुक्तं कूर्म-बीजं तदन्तरम् । नमस्तारायै सकल-दुस्तराँस्तारय-द्वयम् ॥
स्वाहान्तोऽयं भयङ्करी श्रीमद्-भुवन-तारिणी । श्यामां द्वादश-हस्तां च रक्त-वस्त्रां शवासनां ॥
खड्ग-कर्त्रि-धरां नित्यां संस्मरेद् हृदयाम्बुजे । कूर्चं नृसिंहं क्रों कूर्चं लज्जामस्त्रं च कूर्चकं ॥
नारसिंहीति विख्याता श्रीमत्सङ्कट-तारिणी । श्यामां दश-भुजां खड्ग-कर्त्रि-हस्तां शवासनां ॥
शुक्ल-वस्त्रां सदा ध्यायेन्मूलाधार-निवासिनीं । शिरो मे सततं पातु हसौं कुल्लुक-तारिणी ॥
शिखां मे पातु कलह्रीं देवी या ब्रह्म-तारिणी । शिरसो दक्षिणे भागे हसस्त्रीं वज्र-तारिणी ॥
पातु मां वाम-भागे तु वं सहूं दुर्ग-तारिणी । शिरसः पश्चिमे भागे रक्ष फट् उग्र-तारिणी ॥

षडक्षरी कुल्लुकेशी विजयानन्द-तारिणी । खड्गाम्भोज-वराभीति-धारिणी मां सदाऽवतु ॥
मणि-धरि वज्रिणि ह्लीं हूं त्रीं सर्व-वशङ्करि । प्रति-सरे रक्ष रक्ष मां ह्लीं हूं हूं फट् स्वाहया ॥
शिखा-ग्रन्थि-स्थिताऽव्यान्मां देवी श्रीमणि-तारिणी ॥

ॐ ह्लीं हूं क्ष्रौं सर्व-विघ्नानुत्सादय विदारय । हूं फट् स्वाहा विघ्न-तारा दिक्षु मां पातु सर्वदा ॥
ॐ ह्लीं स्त्रीं ग्राः सुरेखे हूं वज्ररेखे ठः हूं फट् स्वाहा पातु भुवि प्रीता मां सुरेखोग्र-तारिणी ॥
इत्यष्टौ कुल्लुकामन्त्रान् विन्यस्य साधकोत्तमः । चतुरशीति-भेदांस्तान् मूलस्थान् विग्रहे न्यसेत्॥
ॐशिरो मे ह्लींस्त्रींहूं फट् पातु मां पञ्चतारिणी । या देव्येक-जटा नाम त्रैलोक्ये जाड्य-हारिणी॥
नेत्रयो ह्लींस्त्रींहूं पातु नीलादेवी त्रिलोचना । भाले श्रींह्लींस्त्रींहंसः हूं फट् स्वाहा भीम-तारिणी॥
भ्रुवोर्मध्यं पातु नित्यं ॐह्लींहंसः सह्लीं सहुं । फट् स्वाहा ज्ञान-तारा या अज्ञानेन्धनदाहिनी॥
ॐह्लींहंसः श्रींहंसः स्त्रींहूंफट् श्रीं प्राण-तारिणी । पातु मां नासिका-मध्ये सर्वापत्क्षय-कारिणी॥
क्लींह्लींस्त्रींहूं ॐक्लींहूंफट् पातु मोहन-तारिणी । मुख-पद्मेऽकुशाम्भोज-वराभय-कराम्बुजा ॥
ॐह्लींहूंफट् पातु ओष्ठं लंबोष्ठी विश्व-मोहिनी । आंह्लींऐं हूं हूं हसस्त्रीं फट् अधरं पातु मे सदा॥
अनन्त-तारिणी देवी भोग-मोक्ष-फल-प्रदा । ऐंॐहूंऐं स्त्रीं ह्लीं फट् हूं ऐं वाक्-तारिणी परा ॥
मां पातु वाक्-प्रदा देवी वचने मङ्गल-प्रदा । ॐ तारे स्त्रीं महा-तारे हूं तारिण्युग्र-तारिणी ॥
रक्ष रक्ष जगत्तारे हूं फट् तारिणी पाहि मां, ॐह्लींश्रींज्रींस्त्रींह्लीं फट् ऐंह्लीं वद वाग्विभवप्रदे॥
सर्वज्ञाज्ञापय स्त्रींहूं जिह्वां मे रक्ष तारिणी । ऐंह्लींहूंस्त्रीं हसस्त्रीं फट् चांचीं चंडोग्र-तारिणी ॥
पातु मे चिबुकं देवी चण्ड-भीति-विनाशिनी, ॐकलह्लीं हूं हसस्त्रीं क्लीं क्लीं फट् कालतारिणी ॥
कपोलौ पातु मे उग्रा स्वर्णाभा नाग-कुण्डला । ॐयुंहूंहूंश्रीं हसस्त्रीं क्लींह्लींह्लंह्लींहूं फट् ऐं सदा ॥
कर्णौ पातु महा-माया विद्या श्रीशब्द-तारिणी । ॐश्रींग्लौंगंहूं हसस्त्रीं ऐं गण्डौ पातु मे सदा ॥
पद्म-युग्म-वराभीति-धारिण्यभय-तारिणी, ॐक्लीं किलि किलि स्त्रीं फट् कण्ठं पातु सु-तारिणी॥
श्रींश्रींह्लींऐंस्त्रींचलूं हसस्त्रींहूं फट् स्त्रींहूंक्षेंहूं करालिनी, रक्ष रक्ष महा-तारे हूंफट् स्वाहा ककुत्स्थलं
ॐत्रींह्लींस्त्रींहूं हसस्त्रींहूंफट् ग्रीवां रक्ष तारिणी, ॐह्लींहूंत्रीं क्लींहसस्त्रीं भस्त्रीं भस्त्रीं जये जये॥
महोग्रे पिङ्गल-जटे ह्लींस्त्रींहूं फट् स्वाहाऽवतु । स्कन्धौ मे जयदा पातु देवी विजय-तारिणी ॥
ॐ हूं ह्लीं त्रीं द्रां द्रीं क्लूं हंसः हूं फट् । बाहु-मूले पातु नित्यं मम सा जय-तारिणी ॥
ॐ द्रां द्रीं द्राविणि क्लिन्ने द्रावय द्रावय द्रुतं । सर्व-शत्रून् महा-माये महा-तारिणि ह्लीं सह्लीं ॥
फट् स्वाहा बाहु-मध्यं मे पातु विद्राव-तारिणी ॥

ॐह्लींक्षं भमलवरयूं श्रींक्ष्रौंहूंसह्लीं सः फट् । करौ पातु सिद्धि-तारा मम सर्वार्थ-साधिनी ॥

ग्रांह्लींक्रों हूं हसस्त्रीं फट् अंगुली ऋद्धि-तारिणी । ॐखफ्रेंस्त्रींहूं हंसः क्ष्रीं नखानखण्ड-तारिणी ॥
ॐह्लींहूं द्रांद्रीं हूंचलूं स्त्रीं सः खफ्रें चण्ड-योगिनि । योगेश्वरि महा-तारे तारकासुर-मर्दिनि ॥
मर्दय प्रमथान् दुष्टान् मम शत्रून् विदारय । शोषय त्रोटय क्षां क्ष्रीं धूं धूं बन्धय बन्धय ॥
सर्वारिष्टं संहर स्त्रीं करौ महोग्र-तारिणी । पातु मे विजयानन्द-दायिनी खड्ग-धारिणी ॥
ॐ स्त्रीं हूं यरलवसहूं हसक्षमलवरयूं ह्रीं ह्रीं । ॐ कुक्षि-देशं मे पातु योगिनी-तारिणी ॥
ॐ ह्रीं ह्रीं हूं हूं स्त्रीं स्त्रीं सः क्लीं क्लीं विमोक्षदे हंसः ।
क्लीं स्ह्लीं पाहि मां पाश्वौभृगु-तारिणी स्वाहा हंसः ॥
ॐ ह्रीं स्त्रीं हूं फट् सोऽहं महोग्र-तारिणी । पाहि मां हृदयासन्ना प्राण-शक्त्युप-बृंहिता ॥
ॐ तारे तारय त्रींहूं हंसस्त्रैलोक्य-त्राण-कारिणी । हूं फट् स्वाहा स्तन-द्वन्द्वं रक्ष मे विजय-प्रदे ॥
ॐ क्षां हूं कलहस्त्रीं फट् काल-रुद्र-निवारिणी । रक्ष रक्ष हूं फट् ऐं हूं उदरं रुद्र-तारिणी ॥
ॐह्लींभस्त्रीं हसस्त्रीं फट् नाभि मे जीव-तारिणी । ह्रींक्लींहूं सहस्त्रीं फट् लिङ्गं प्रजन-तारिणी ॥
ॐ ह्सौंह्लींहसस्त्रीं हूंहूंक्लींस्त्रीं फट् सदा मम । आधारं पातु सा देवी त्रैलोक्याधार-तारिणी ॥
ॐहूंह्लींस्त्रीं जम्भिनि श्रींह्लों वशिनि क्लीं मोहिनि । ॐद्रां द्राविणि मे शत्रून्हन द्रावय मोहय ॥
क्षोभय क्षोभय हूं हूं द्रुतं जम्भय जम्भय । तारे तारिणि रुद्रास्थि-धारिणि ब्रह्म-रूपिणि ॥
ब्रह्म-विष्णु-शिव-त्राण-कारिणि क्षीं फट् अम्बिके । रक्षिणि तारिणि देवि त्रिखण्डं पातु मे सदा ॥
हूंह्लींस्त्रींश्रीं हसस्त्रीं ह्लींहूं फट् स्वाहा ममाऽवतु । नितम्ब-स्थूल-सर्वाङ्गी सर्वदा सर्व-तारिणी ॥
ह्लांहूंह्लींक्लींब्लूंस्त्रींहूं फट् ऊरू मे भङ्गतारिणी । ॐझ्रींज्त्रींक्रीं हसस्त्रीं फट् हूंह्लीं जम्भय मोहय ॥
स्तम्भय द्रावय द्रांद्रींक्लीं चलूं सः शत्रु-पक्षगान् । मम जानु-युगं रक्ष देवी जम्भक-तारिणी ॥
ॐ श्रीं हूं ह्लीं ज्त्रीं झ्रीं श्रींहूं हूं ममाऽवतु । जङ्घा-युग्मं महा-देवी पातु सा भ्रम-तारिणी ॥
ॐह्लींगांगींग्लौंगूंगेंगौंग्लौंहूंलत्रीं फट् परमेश्वरी । गुल्फ-युग्मं सदा पातु देवी श्रीगण-तारिणी ॥
ॐ हूं फट् पाद-पृष्ठं पातु परोक्ष-तारिणी । ॐ हूं ह्लीं फट् महा-तारा पातु मे चरणांगुलीः ॥
ॐह्लींस्त्रींग्लौंलंहसस्त्रींहूं फट् स्वाहा-स्वरूपिणी । पादाधः पातु मे नित्यं देवी श्रीभूमि-तारिणी ॥
ॐक्षौंक्षींहूंह्लींस्त्रीं हसौं फ्रें फट् ईश्वरि । तुरु तुरु स्त्रीं श्रीं ह्लीं हूं वज्र-तेजोमये ऐं फट् ॥
सर्वास्त्र-शस्त्र-वारिणि सर्व-प्रहरण-निसूदिनि । सर्व-कृत्याभिचार-ग्रहारिष्ट-निवारिणि ॥
सर्वास्त्राणि स्तम्भय स्त्रीं मर्दय ह्लीं विदारय । भंजय द्रां बन्धय क्लूं सन्तापय हसौं ह्लः फट् ॥
महोग्र-तारिणी-विद्या रोम-कूपानि मेऽवतु । सर्वायुध-करा देवी सर्वतोऽभय-दायिनी ॥
ॐह्लींभ्रूंत्रूंरुंज्त्रूं हूं नमो भगवति ! दंष्ट्रिणि भीम-वक्त्रे महोग्र-रूपे कालिके केलि-

निश्चले क्लुं क्लुं क्लुं विद्युज्जिह्वे हूं हूं कटि-श्रोणि-मांसभरणे विशाल-मुण्ड-माला-धारिणि द्रावय द्रावय महा-रौद्रि पर-भट-गजाश्व-हृच्छोषिणि अखिल-दृष्टि-भूषिणि निखिलास्त्र-परी-वर्त्त-कारिणि भ्रुकुटी-कृत-नयने विषम-नेत्रे महा-रक्त-वसा-मांस-वसा-मेदोपलिप्त-गात्रे कह कह, मह मह, भ्रूंद भ्रूंद नाना-जीमूत-वर्णे विस्नवद्-घण्टावकीर्ण-देहे शव-मांस-प्रिये बिम्बे बिम्बे रण-बिम्बे रौद्र-रूपे ह्लौं ह्लौं ह्लः कुन्त कुन्त आकर्षय आकर्षय धुनु धुनु हेंहः खफ्रें विजृम्भिनि हूं क्षौं नमो जय त्रैलोक्य-विजये हूं फट् स्वाहा त्रैलोक्य-विजया तारा सर्वाङ्गं मे सदाऽवतु ।। ॐह्रींस्त्रीं चांचींचैं हूं फट् श्रींह्रीं महेश्वरि हूं विद्युत्प्रभे विद्ये विजया-नन्ददाऽवतु । ॐह्रींस्त्रीं चांचींचैं हूं फट् श्रींह्रीं महेश्वरि हूं विद्युत्प्रभे विद्ये विजया-नन्द-दायिनि चिदानन्द-मये देवि चेतने चित्स्वरूपिणि हंसः हंसां हंसीं हूं सः पातु चैतन्य-तारिणी ।।

इति त्रिर्व्यापकं कृत्वा अष्टाधारान् प्रविन्यसेत् । शिव-शक्त्यात्मकैर्वर्णैस्तारिणी-मन्त्र-संयुतैः ।।

ॐह्रींस्त्रींडांडींडूंडैंडः डरलकसहैं हूं वंशंषंसं ग्लौं भूमि-तत्त्वात्मिके डाकिनि तारिणि कालाग्नि-रुद्र-सहिते ममाधारं सदाऽवतु । ऐंह्रींश्रीं हसखफ्रें ह्सौं यरलवसहूं ह्सौं हसखफ्रें श्रींह्रींऐं ॐ आधार-वासिनि कालाग्नि-रुद्र-सहिते ममाधारं रक्ष रक्ष स्वाहा । ॐह्रींहूं रांरीं रूंरैंरौंरः स्त्रीं रडलकसहैं ऐंह्रींश्रीं हसखफ्रें स्त्रीं लवरयूं ह्सौः सः फट् श्रींह्रींऐं बंभंमंयंरंलं राजसि आप्याश्रये ब्रह्मणा सहिते पाहि अधिष्ठानं जगन्मयि विघ्नान् मे जलजान् छिन्धि रक्ष राकिनि तारिणि ।।

ॐस्त्रींह्रींलांलीलूंलैंलौंलः फट् ह्सौः सः फट् लडरकसहौं ह्लैंह्लः ऐंह्रींश्रीं सहखफ्रें ह्सौः हसक्षमलवरयूं ह्सौः हसखफ्रें श्रींह्रींऐं डंढंणंतंथंदंधंनंपंफं सात्त्विके जीवात्म-रूपिणि श्रींह्रीं रुद्रानन्द-प्रदायिनि तेजोमये ज्वलत्कालानल-दीप्ते महेश्वरि मणिपूरं सदा पाहि देवि लाकिनि तारिणि ॐह्रींहूं कांकींकूंकैंकौंकः स्त्रीं ह्सौं सः क्लीं कलडरसहौं हूं श्रीं हसखफ्रें ह्सौं ह्सौं हसक्षमलवरयूं हसखफ्रें श्रींह्रींऐं कंखंगंघंङंचंछंजंझंञंटंठं फट् । पर-तत्त्वात्मिके देवि ! जगच्चैतन्य-कारिणि ! विष्णु-वक्षःस्थलावासे कमले कमलालये ।। क्लींकारे कामदे देवि! प्राण-शक्ति-प्रबोधिनि ! अनाहतं रक्ष नित्यं देवि! काकिनि तारिणि ।।

ॐह्रींत्रींहूं ह्रींश्रींहौंह्लैंस्त्रीं ह्सौं फट् परापरे सांसींसूंसैंसौंसः ह्रीं सडरलकहौं ह्रीं ह्रं ऐंह्रींश्रीं हसखफ्रें ह्सौं क्षमलवरयूं ह्सौं हसखफ्रें श्रींह्रींऐंह्रीं फट् परापरापरे अंआंइंईंउंऊंऋंॠंऌंॡंएं ऐंओंऔंअंअः फट् आकाशात्मिके देवि! विद्युन्मति-विरोचने हिरण्य-गर्भाश्रये देवि ग्लौंः हूं विशुद्धं पाहि मे सदा । चण्ड-मण्डल-सङ्काशे देवि! साकिनि तारिणि ।।

ॐह्लींस्त्रींहूं हांहींहूंहैंहौंहः फट् श्रीं हसकलरडैं ऐंह्लींश्रीं हसखफ्रें ल्हौः ह्रीं त्रीं फट् ठं ठः स्फुर स्फुर लव प्रक्ष सहस्त्रीं हसौं हसखफ्रें श्रींह्लींऐं हंक्षं हंसः हूं सोहं ह्रीं फट् मनोमये ब्रह्म-तारा-लये ईशे सदा-शिव-हृदि स्थिते साभिलाषं मनो नित्यं पाहि हाकिनि तारिणि ।।

ॐह्लींस्त्रींहूं यांयींयूंयैंयौंयः सौं हं हंसीं स्त्रीं हसौं ऐंह्लींश्रीं हूं हसखफ्रें हसौं भगवत्यम्ब चिन्मये बुद्धि-तत्त्वात्मिके हलक्षमलवरयूं सहक्षमलवरयीं हसौं सहखफ्रें श्रींह्लींऐं प्रज्ञां रक्ष जगन्मये निखिल-प्रपञ्च-रूपिणि हंसः सोहं हसौं सः फट् जगत्-तत्त्वात्मिके देवि ! एक-पत्रं ममाऽवतु ।।

ॐह्लींस्त्रींहूं जगद्धात्रि जगदानन्द-दायिनि ह्रांह्लींह्रूंह्लैंह्लौंह्लः स्त्रीं फट् जगदाह्लाद-रूपिणि ह्लींकारं मे अहं-तत्वं पातु सच्चित्-स्वरूपिणि ऐंह्लींश्रीं हसखफ्रें ह्लींहूंक्लीं सः हसौं स्त्रीं फट् अघोर-मुखि तारे हूं सर्व-प्रत्यय-कारिणि ह्सौं ऐं ह्रीं हसखफ्रें सक्लीं हूं श्रीं हसौं ह्रीं ऐं सः सहस्राराधिष्ठिते हूं ह्रीं महा-शिव-विभूषणे रक्ष रक्षाहंकृति मे जगच्चैतन्य-तारिणि ।।

ॐ ह्रीं हूं स्त्रीं हसस्त्रीं हसकलह्रीं हसौं तारिणि ब्रह्म-तारिणि हसौं हसखफ्रें हश्रीं श्रींह्रीं ऐं परमे परमे परे घोरे घोरे महा-घोरे अघोरे घोर-रूपिणि घोर-घोर-तरे भस्त्रां भस्त्रीं हूं हूं परमेश्वरि चिदानन्द-परब्रह्म-तारिणि श्रीं सः ह्रीं सः फट् परमे शिव-पर्यङ्के शुद्ध-पद्मासन-स्थिते सहजानन्द-सुस्निग्धे पाहि मामुग्र-तारिणि ।।

नव-ताराः प्रविन्यस्य षडङ्गं विन्यसेत् पुनः ।।

ऐंक्लींसौं ॐ हसस्त्रीं हूं ह्रीं स्त्रीं फट् स्वाहा हृदयेऽवतु खड्गोत्पल-वराभीति-धरा-भैरव-तारिणि ऐंक्लींसौः इंएं कलह्रीं हसकलह्रीं सक्लीं क्लीं ह्रीं हूं ह्रीं स्त्रीं हूं ऐं क्लींसौः मातङ्गिनि मोहिनि ह्लींश्रीं हूं ऐं वज्र-वैरोचनीये हूं हूं ऐं हूं फट् स्वाहा ह्रीं शिरसे पातु देवि खड्गोग्र-तारिणि ।।

ॐईंऐं कलह्रीं श्रींह्लींहूं स्त्रीं हूं फट् श्रीं हसकलह्रीं सहूं ह्रीं शिखां पाहि मम त्रैपुर-तारिणि ह्लींस्त्रींहूं श्रींह्लींत्रीं ऐं वज्र-वैरोचनीये हूंहूं फट् स्वाहा वज्र-तारे ममाङ्गे वज्रतां कुरु । कवचं मम सर्वाङ्गं रक्ष श्रीवज्र-तारिणि ।।

ॐहूंह्लीं ऐंक्लींसौः नमो मातङ्ग-तारिणीश्वरि ! सर्व-मुख-रञ्जनि श्रीं सर्व-सत्त्व-वशङ्करि स्त्रीं सर्व-स्त्री-पुरुष-वशङ्करि सर्व-वैरि-वशङ्करि ह्लींक्लींह्लींहूंहूं हस्त्रीं सर्व-राज-वशङ्करि सर्व-दुष्ट-शङ्करि ऐंक्लींसौः नेत्र-मण्डले सदा स्थिता पाहि तारे मातङ्गि विश्व-मोहिनि ।।

ॐ ह्लींस्त्रींहूं फट् क्रींक्रींक्रीं हूंहूं ह्लींह्लीं हसौः स्त्रीं ह्लः फट् स्त्रीं हूं ह्लीं ॐ कालि कालि ॐॐॐ ह्लः स्त्रींहूं खफ्रें क्षौं क्षः स्त्र्यौं स्त्र्यः सहैं हंसः नमो भगवति सस्फृं प्रचण्ड-बालिके खड्ग-शूल-गदा-धरे हूंहूं हेंहैं सर्व-शक्ति-धरे सर्वारि-सूदनि रक्त-मांसाशने भीमे खर्प-खट्वाङ्ग-धारिणि मां रक्ष रक्ष विजये मम शत्रून् विनाशय विनाशय सर्व-दुष्टानरिष्टान् निवारय सर्व-ग्रह-यक्ष-भूत-क्रूर-मातृ-भयं हन कूष्माण्ड-भैरव-क्षेत्रपाल-डाकिन्युरङ्गमान् निवारय निवारय खेचरान् ब्रह्म-राक्षसान् ये मां हिंसन्ति प्रत्यक्षं कृत्या-द्रोहस्य कारकाः परोक्षे वा तान् ज्वल ज्वालिनि हूं हन क्षयं नय नय प्रमर्दय प्रमर्दय प्रणाशय प्रणाशय शोषय शोषय भ्रूं रूं क्ष्रौं क्ष्रौं भ्रैं फट् ।

कर-द्वयम् कालिका-मन्त्रतो न्यस्य गायत्र्या व्यापकं चरेत् ।।

ह्लींस्त्रींहूं फट् एक-जटे विद्महे ह्लींस्त्रींहूं परे नीले विकट-दंष्ट्रे ह्लीं धीमहि ।।

ॐ ह्लींस्त्रीं हूं फट् ऐं सः स्त्रीं तन्नस्तारे प्रचोदयात् मां पात्युग्र-तारिणि ।।

ॐ अक्षोभ्यः शिरः पातु सर्वदा क्षोभ-कारकः । पूर्वे ऐंह्लींश्रीं ॐ मां रोचनः पातु सर्वदा ।। ऐंह्लींश्रींॐ पश्चिमेऽव्यात् सर्वदा सिद्धि-नायकः । ऐंह्लींश्रींहूं फट् आग्नेय्यां नामको मां सदाऽवतु।। ऐंह्लींश्रींहूं फट् नैऋत्यां मां पातु मामकः सदा । ऐंह्लींश्रीं हूं फट् वायव्यां पातु पावकः सदा ।। ऐं ह्लींश्रींहूं फट् ऐशान्यां तारकः पातु मां सदा । तद्-बहिः पूर्व-दिग्भागे ऐं ह्लीं श्रीं ॐ नमो ।। नमो ब्रह्माणि रक्ष रक्ष हंस-वाहिनि हंसिनि आंह्लींक्रों ह्लीं हसैं स्त्रीं सः असिताङ्ग-निषेविते ।। रक्ष रक्ष महामाये हंसः सोऽहं-स्वरूपिणि । आग्नेय्यां ऐंह्लींश्रीं ह्लौंस्त्रींहूं फट् ईंह्लीं नमो नमो ।। माहेश्वरि वृषारूढे शूल-हस्ते महामाये । हेंहौं हूं ह्लींश्रीं रक्ष रक्ष मां रुरु-भैरव-भूषणे ।।

ऐं ह्लीं श्रीं ॐ ह्लीं हूं स्त्रीं ऐं नमो भगवति ह्लीं ह्लीं कौमारि मां रक्ष । रक्ष दक्षिणे शिखि-वाहने शक्ति-हस्ते ऐं ह्लीं हैं चण्ड-भैरव-भूषिते ऐंह्लींश्रीं ह्लीं हूं फट् ।।

ॐ ग्लौं नमो भगवति स्तुवं वाराहि मां रक्ष रक्ष दंष्ट्रायुधे महा-बले उन्मत्त-सहिते विद्ये नैऋत्यां रक्ष मां सदा । ऐंह्लींहूं ॐ क्लीं हैं हंसः सोहं नमो नमो भगवति वैष्णवि श्रीं ह्लीं व्रीं गरुड-वाहिनि चक्रायुधे मां रक्ष रक्ष ऐं जौं ह्रौं हं सौः सः फट् माया-सहस्र-परि-वर्त्तिनि क्रोध-भैरव-भैरवि प्रतीच्यां रक्ष देवेशि सर्व-विघ्नान् निवारय ऐंह्लींश्रीं ॐह्लींह्लीं द्रीं व्रीं हस्रैं ऐं त्रां इं ऊं ह्लीं नमो नमो भगवत्यजिते ऐन्द्रि गज-राजोपरि-स्थिते वज्र-हस्ते हैं हसौं मम वैरि-विनाशिनि कपालि-सहिते रक्ष वायव्यां दिशि मां सदा । ऐंह्लींश्रीं ॐ स्त्रीं हूं फट् चांचींचैं नमो भगवति श्रीं चामुण्डे शव-वक्षःस्थे खट्वाङ्गायुध-धारिणि ह्लौं ह्लीं हसौं भीषणाख्ये उदीच्यां रक्ष मां सदा । ऐंह्लींश्रीं ऊं ईं लं ह्लीं ॐ ह्लीं स्त्रीं स्त्रीं हूं फट् नमो नमो

भगवति महा-लक्ष्मि पद्मासन-संस्थिते परे पद्मायुध-धरे ॐ ह्रीं ह्क्लीं ह्क्लीं ह्सैं हस्त्रीं विभूतिदे संहार-भैरवानन्दे ऐशान्यां पाहि मां सदा। ऐं हैं हौं हेतुकः पातु पूर्वे। ऐं वं हूं फट् ह्रौं स्लौं सः फट् आग्नेये। त्रिपुरान्तकः क्लौं हूं याम्ये। ऐं वं वह्नि-वेतालः पातु मां भयाद् दक्षिणेऽव्यादग्नि-जिह्वः। ऐं अं कं नैऋत एव मे हूं ह्रीं क्रें ईं कां भ्रूं ह्रीं हूं कालाक्षः पातु मां सदा। वायु-कोणे ऐं मं हूं मतयो भैरवोऽवतु। उदीच्यां एं ऐं हूं फट् एक-पादः सदाऽवतु। ऐं भीमा मां पातु भीम-वटुक ऐशान्यां पातु मां सदा। ॐ तारे तारे महा-तारे उत्तारे भय-तारिणि। ॐह्रींश्रीं त्रीं हूं क्रों वं क्रों लं वज्राश्मास्त्राणि मर्दय मर्दय द्रावय ह्रीं हः कह-कह विमोडय विमोडय हसस्त्रीं फट् स्वाहैन्द्रास्त्रात् पाहि तारिणि॥

ॐ तारे वं विश्व-तारे ह्रीं स्त्रीं वारुण-तारिणि। वं क्रों वं क्रों अग्न्यस्त्राणि स्तम्भय द्रावय द्रुतं परिवर्त्तय कर्तयाशु भ्रामयास्त्रं विदारय सङ्कोचय छेदय स्त्रीं सर्व-शत्रून् विनाशय अग्न्यस्त्रेभ्यः पाहि मां त्वं वह्नि-स्तम्भन-तारिणि॥

ॐ ह्रीं तारे महा-तारे काल-दण्ड-विनाशिनि हूं क्रों यं क्रों हसक्रों फट् दण्डास्त्राणि निवारय भंजय त्रोटय क्षुन्न छिन्धि छिन्धि विपाटयास्त्रं स्तम्भय स्तम्भय क्ष्रीं ह्रीं याम्यास्त्राद् रक्ष तारिणि॥

ॐ क्लीं ह्रीं त्रीं विष्णु-तारे सर्वासुर-विदारिणि असुरास्त्राणि सर्वाणि निवारय विदारय भञ्जय त्रोटय कुन्तं मर्दय त्रोटय द्रुह सर्वासुर-प्रहरणेभ्य आः सुरेखे सुरेखे हूं वज्र-रेखे विदारिणि क्षौं क्षीं क्षुं ह्रीं हूं फट् ह्सौः कृत्या-द्रोहं प्रणाशय माया-व्यूहं विदारय त्रौं त्रासिनि मां रक्ष आसुरास्त्रेभ्य ईश्वरि॥

ॐ ह्रीं त्रीं हूं महा-तारे ह्लं ह्लः क्रों वं क्रों वं क्रों क्षूं क्षौं वषट् ज्वल ज्वल शूलिनि क्ष्रीं दुष्ट-ग्रह-भयापहे हूं फट् स्वाहा वरुणास्त्र-कृत्या-द्रोहान् निवारय शोषय क्षोभय क्ष्यचं फट् भिन्दि भिन्दि विलोपय आप्य-दुर्गे आपदोऽस्मान् दुर्गे दुर्गे रक्षिणि फट् स्वाहा मां पश्चिमे पातु श्रीदुर्गोत्तारिणी तु या॥

ॐ ह्रीं श्रीं भीम-तारा या ज्ञेया गिरि-वराश्रया। महा-कटा महा-वेगा महा-धोरा महा-बला। ह्लां ह्लां स्थां स्थीं महोच्छुष्मा वाय्वस्त्राणि विनाशय। धूं धूं धूमावति क्लिन्ने क्लेदय द्रावयाऽहितान् आधार-तारिणि छिन्धि समीरास्त्राणि मे रिपोः॥

ॐ ह्रीं हूं वज्र-वैरोचनीये वज्र-तारिणि हूं हूं फट् स्वाहा ह्लैं सक्लीं गदां चूर्णय भञ्जय यक्षास्त्राणि यक्ष-मायां द्रीं द्रावय द्रीं विमोचय उदीच्यां रक्ष मां देवि! परितो वज्र-तारिणि॥

ॐ ह्रीं स्त्रीं क्लीं स्त्रीं काल-रुद्र-शक्ति-तत्व-स्वरूपिणि ह्लँ ह्लौं क्ष्रौं महा-तारे तारिणि ब्रह्म-स्वरूपिणि प्रचण्डे प्रमथास्त्राणि भञ्जय ह्रीं हः खण्डय रौद्र-कृत्या-पशूनुग्रान् प्रमथान् सर्प-राक्षसान् ब्रह्म-राक्षस-वेतालानुत्सारय निवारय रुद्रास्त्रेभ्यः सदा पाहि मां त्वं प्रचण्ड-तारिणि ॥

ॐ ह्रीं हंसः क्रों ॐ हंसः छ्रां सोहं क्रों वषट् हक्लीं सक्लीं हसक्लीं फट् हूं स्त्रीं ब्रह्मोग्र-तारिणि द्रुतं ब्रह्मास्त्राण्युपशान्ति त्वं नय विश्वात्मिके शिवे वेदोदिताः क्रियाः सर्वाः कृत्या-द्रोह-फल-प्रदाः। ये मामुद्दिश्य कुर्वन्ति तांस्तान् हिंसन्तु हिंसकान्। प्रचण्ड-तारिणि चक्र-भीतया क्रोधाग्नि-धर्षिताः ॥

ॐ ह्रीं स्त्रीं हूं हसस्त्रीं ह्रीं गांगींगूंगैंगौंगः सः फट् ऐंह्रींश्रीं हूं स्लूं सुपर्णे क्रों अम्बान्तां सहौं ह्सौः हंसः सोहं नाग-बाणान् हन संहन द्रां द्रीं ह्रीं च्लूं स्त्रीं हसस्त्रीं खें खें क्षः तार्क्ष्य-तारिणि विष-सर्प-भयास्त्राणि संहराखिल-भीति-हेति-नाग-पाशान् संहरैहि देवि श्रीतार्क्ष्य-तारिणि।

इति शत्रोरस्त्र-दुर्गं निराकृत्य विशुद्ध-धीः। पठेदिमं महा-मन्त्रं सर्व-भीति-विनाशनम्——

ॐ ह्सौं वसहूं कलह्रीं हसस्त्रीं फट् नरान्त्र-मालाभरण-भूषिते महा-कौलिनि महा-ब्रह्म-वादिनि महा-धनोन्माद-कारिणि महा-भोग-प्रदे अस्मदीयं शरीरं वज्र-मयं कुरु कुरु दुर्जनान् हन हन महीपालान् क्षोभय क्षोभय पर-चक्रं भंजय भंजय जयङ्करि गगन-गामिनि यमलवरयूं हयमलवरयूं भमलवरयूं शमलवरयूं क्षमलवरयूं भमलवरयूं हसक्षमलवरयूं सहक्षमलवरयूं हंसः सोहं हूं ह्रीं स्त्रीं ह्सौं द्रांद्रींद्रूं त्रांत्रींत्रूंत्रैंत्रौंत्रः श्रीमत् कुल्लुक-तारिणि सर्वत्र मां रक्ष रक्ष स्वाहा ॥

ॐह्रींस्त्रींश्रींह्रीं महादेवि अश्वारूढे जय-प्रदे। वाहनानि पातु नित्यं मम सर्वार्थ-साधिनि ॥ ह्रीं ध्रँ सुरेखे देवि हूंहूं फट् रथं ममाऽवतु। रांरींरूंरैंरौंरः रक्षिणि हूं फट् परमानन्द-तारिणि ॥

ॐ हूं पुष्प-केतु राजार्हते गतागतायै सम्यगुदितायै स-ग्रह-राशि-नक्षत्रायै उदितादित्य-मण्डल-वर्त्तिन्यै नित्य-चैतन्योदितायै ह्रींत्रीं पर-ज्योतिस्तारायै हूं फट् स्वाहा ह्रीं ज्योतिस्तारिणि क्लिन्ने क्लेदिनि मे ध्वजं सदा रक्ष रक्ष वैरि-पक्षान् क्षयं कुरु नमोऽस्तु ते ॥
ॐ क्लीं कामाकर्षिणी मां पातु सर्वार्थ-साधिनी। तेजसाकर्षिणी बुद्ध्याकर्षिणी ज्ञानाकर्षिणी ॥
चित्ताकर्षण-देवी च मोहाकर्षण-रूपिणी। तपसाकर्षिणी शस्त्राकर्षिणी भूताकर्षिणी ॥
वाहनाकर्षिणी मन्त्राकर्षिणी क्षेत्राकर्षिणी। दुर्गाकर्षण-रूपा च रत्नाकर्षण-रूपिणी ॥

अहङ्काराकर्षिणी च योगाकर्षण-रूपिणी । विद्याकर्षण-रूपा च श्रद्धाकर्षण-रूपिणी ॥
ओजसाकर्षिणी चैव स्तम्भिनी मोहिनी तथा । द्राविणी क्षोभिणी चैव वशीकरण-रूपिणी ॥
आकर्षिणी सम्मोहिनी पञ्च-बाणेश्वरी परा । सर्व-रूपा महा-तारा समरे पातु मां सदा ॥
अरण्ये प्रान्तरे भीमे निरालम्बे जल-प्लवे । वराभयाम्भोज-हस्ता पातु मामुग्र-तारिणी ॥
विषमे सङ्कटे घोरे कान्तारे पर्वतालये । खड्गाम्भोज-धरा देवी पातु मां दुर्ग-तारिणी ॥
सिंह-व्याघ्र-समाकीर्णे कानने भीषणालये । भीम-दंष्ट्रा पातु नित्यं खड्ग-खर्पर-धारिणी ॥
सभायां शास्त्र-वादे तु रिपु-संघ-समाकुले । मुष्टि-यन्त्रित-हस्ता मां पातु नील-सरस्वती ॥
खर्वा प्रत्यालीढ-पदा शवासना-गता शिवा । मुष्टि-हस्ता स्मृता देवी सद्यः स्तम्भयतेऽखिलान् ॥
क्षरत्पीयूष-कलिका सौम्य-स्मेराम्बुजानना । रोगेभ्यः पातु मां नित्यं देवी याऽमृत-तारिणी ॥
प्रमथेभ्यः पिशाचेभ्यो राक्षसेभ्यो ग्रहादपि । ब्रह्म-राक्षस-वेताल-कूष्माण्डादिभ्य एव च ॥
सर्वत्र रक्ष मां देवि! सिंहास्याद् भूत-तारिणि । पूर्वस्यां दिशि चाग्नेये दक्षिणे नैर्ऋते तथा ॥
वारुणे चैव वायव्ये कौबेरे रौद्र-गौरवे । छिद्र-स्थानेषु सर्वेषु रन्ध्र-देशेषु च क्रमात् ॥
कर्त्रि-खर्प-धरा देवी पातु मामुग्र-तारिणी । सैन्यानि वाहनान्येव गजाश्वादीनि मेऽवतु ॥
उग्रापत्-तारिणी देवी सर्व-मङ्गल-दायिनी । गोत्रं मित्राणि मे रक्ष पत्नीः प्रणय-शालिनीः ॥

महोग्र-तारिणी पातु सर्व-भीति-विनाशिनी ॥

ॐ हूङ्कार-बीजोद्भवे लोलजिह्वे भयङ्करि । कर्त्रि-खर्प-धरे उग्रे उग्र-तारे नमोऽस्तु ते ॥
आकाश-निलये तारे त्र्यक्षरे ब्रह्म-वादिनि । सिद्धानां शुद्धिदे शुद्धे नमस्ते चोग्र-तारिणि ॥
सर्वत्र रक्ष मां देवि ! भयेभ्यश्चोग्र-तारिणि । प्रसादादुग्र-तारायाः न मां हिंसन्ति हिंसकाः ॥

ॐ ह्लीं ह्लीं ह्रूं स्त्रीं हसस्त्रीं स्फुर स्फुर हसस्त्रीं फट् प्रस्फुर प्रस्फुर स्त्रीं ह्लीं चट चट हूं ह्लींश्रीं हसकलरीं प्रचट प्रचट हूं ह्लीं कह कह क्ष्रीं क्षीं क्रों हूं वम वम स्त्रीं हूं मे रिपून् घातय घातय हूं फट् क्लीं क्रों ठः क्ष्रीं सः हसक्षमलवरयूं सहक्षमलवरयीं हसखफ्रें ह्सौं सहूं हंसः सोहं हूं फट् सोहं सर्वाङ्गं मेऽवतु तारिणी ॥

पातु मे सर्वदा नित्या सर्व-मन्त्र-प्रबोधिनी । भैरवी सुन्दरी काली मातङ्गी छिन्न-मस्तका ॥
नील-सरस्वती चेति मन्त्र-षट्कमुदाहृतं । इति ते कथितं वत्स ! कथितं देव-दुर्लभं ॥

फल-श्रुति

त्रैलोक्य - विजयं नाम ब्रह्म-मन्त्रैक-विग्रहं । अनेन कवची भूत्वा भावयन्नुग्र-तारिणीं ॥
आधारस्था परां शक्तिमाकुंच्यानीय यत्नतः । षडङ्ग-सहितां मूर्ध्नि परानन्दे निमील्य च ॥
सहजानन्दजं तेज आत्माभेदेन भावय । शिवोऽहं भैरवश्चाहं नित्यानन्दोऽहमव्ययः ॥

संहर्त्ताऽहं रिपूणां वै महोग्र-तारिणी ह्यहं । सर्व-शक्ति-मयो ब्रह्म-रूपोऽहं तारिणी-मयः ।
इत्यात्मानं भावयस्त्वं मन्त्राण्यरिषु योजयं ।।

ब्रह्म-मन्त्रं स्मरन् मन्त्र-तेजोभिरुज्ज्वलान्यपि । दह्यन्त्यविरलान्येव स्व-शुष्कान्यनलो यथा ।।
ब्रह्म-मन्त्रैः पुटं कृत्वा यो जपेत् तारिका-मनुं । कवचं वा तारिकायास्तस्य सिद्धिर्भवेद् ध्रुवं ।।

ॐ क्लीं ह्लीं ऐं क्लीं सौं कएईलह्रीं हसकहलह्रीं सकलह्रीं स्त्रीं ऐं क्रों ह्लीं हूं श्रीमदेक-जटे ब्रह्म-षोडशी-स्वरूपिणि त्रिपुर-सुन्दरि ह्लीं त्रीं हूं फट् कएइलह्रीं स्त्रीं हूं नील-सरस्वति महा-तारे सर्व-सिद्धि प्रयच्छ ॐ ह्लीं क्लीं ह्लीं ग्लौं स्त्रीं फट् स्वाहा ।

यः पठेत् कवचं दिव्यं महोग्राया इदं शुभम् । मन्त्र-सिद्धिर्भवेत् तस्य पुरश्चर्यां विना द्रुतम् ।।
सिद्ध्योऽष्टौ करस्थाः स्युर्देवो-पुत्रोऽयमीरित. । धर्मार्थ-काम-मोक्षाणां भाजनोऽयं न संशयः ।।
या स्त्रियो भाग्यतो लब्ध्वा धारयन्ति इदं महत् । कवचं तत्प्रभावेण दिव्यान् पुत्रान् समाप्नुयुः।।
सौभाग्यं विपुलं भोग्यमारोग्यं सर्व-सम्पदः । प्राप्नुवन्ति जय-पराः साक्षाद् देवीति सोच्यते ।।
इतीदं कवचं वत्स ! कथितं तव भक्तितः । मम प्राणाधिकं ह्येतद् गोप्तव्यं तत् प्रयत्नतः ।।

।। उत्तर-गन्धर्व-तन्त्रे त्रैलोक्य-विजयं नाम श्रीतारा-कवचं सम्पूर्णम् ।।

हिन्दी रूपान्तर

श्रीभैरव ने कहा—श्रीमान् शङ्कर की अभ्यर्थना कर उनकी प्रिया ने उनसे कहा कि कृपया चतुर्वर्ग (धर्मार्थ-काम-मोक्ष) के फल को देनेवाले कवच को बताइये ।

श्रीमहादेव ने कहा—हे महा-देवि ! ब्रह्मा द्वारा समर्थित ब्रह्म-रूपिणी तारा का कवच मनुष्यों की उग्र आपत्तियों से रक्षा करनेवाला है । यह त्रैलोक्य-विजय नामक कवच मन्त्र-स्वरूप है, सभी शक्तियों से युक्त और सभी अरिष्टों का नाशक है ।

विनियोग—इस त्रैलोक्य-विजय कवच के ऋषि अक्षोभ्य हैं, छन्द अनुष्टुप् है, देवता श्रीतारिणी हैं, बीज 'ह्लीं' है, शक्ति 'त्रीं' है, कीलक 'हूं' है और 'अमुक' पर विजय पाने की कामना से इसके पाठ का विनियोग है ।

ऋष्यादि-न्यास—शिर में श्री अक्षोभ्य ऋषि को नमस्कार, मुख में अनुष्टुप् छन्द को नमस्कार, हृदय में श्री तारिणी देवता को नमस्कार, गुह्य में 'ह्लीं' को नमस्कार, नाभि में 'त्रीं' शक्ति को नमस्कार, पैरों में 'हूं' कीलक को नमस्कार और अञ्जलि में 'अमुक' पर विजय पाने की कामना से इसके पाठ के विनियोग को नमस्कार ।

ब्रह्मा, विष्णु, महेशादि देवता, सभी सिद्धियाँ, माहेश्वरी और भयङ्करी तथा नारसिंही—महोग्रा की कुल्लुका जो सभी तन्त्रों में गुप्त हैं—ये सब तारिणी की प्रकृति हैं । इन्हें सदा एक ही रूप में ध्यान करे । मूर्धा के मध्य में इस स्वरूप को ध्यान कर त्रिविधा कुल्लुका का अर्चन करे । प्रत्येक त्र्यक्षरी है । 'माहेश्वरी' कुल्लुक-तारिणी चतुर्वर्ग के फल की प्राप्ति के लिये सदा ऊर्ध्व में रक्षा करे । वह घोर बादलों

को जैसो श्याम कान्तिवालो और षोडश-भुजा है, खड्ग-कर्त्रि और पोत वस्त्र धारण किये शव पर विराजमान है। भुवन-तारिणी 'भयङ्करी' को हृदयकमल पर द्वादश-भुजा, रक्त-वस्त्रा, शवासना, खड्ग-कर्त्रि-धारिणी ध्यान करे। सङ्कट-तारिणी 'नारसिंही' को मूलाधार में श्याम-वर्णा, दश-भुजा, श्वेत-वस्त्रा, खड्ग-कर्त्री-हस्ता, शवासना ध्यान करे। 'हसौं' कुल्लुक-तारिणी सदा मेरे शिर की रक्षा करे।

'कलह्रीं' १ ब्रह्म-तारिणी मेरी शिखा की रक्षा करे। 'हसस्त्रीं २ वज्र-तारिणी मेरे शिर के दक्षिण भाग को, 'वंसहूं' ३ दुर्ग-तारिणी वाम-भाग को और 'रक्ष फट्' ४ उग्र-तारिणी पश्चिम भाग की रक्षा करे। खड्ग, कमल, वर, अभय-धारिणी षडक्षरी कुल्लुकेशी ५।विजयानन्द-तारिणी सदा मेरी रक्षा करे। शिखा-ग्रन्थि में स्थित ६ श्रीमणि-तारिणी मेरी रक्षा करे—मणिधरि वज्रिणि ह्रीं हूं स्त्रीं सर्व-वशङ्करि प्रतिसरे रक्ष रक्ष मां ह्रीं हूं हूं फट् स्वाहा। ७ विघ्न-तारा—ॐ ह्रीं क्ष्रौं सर्व-विघ्नानुत्सादय विदारय हूं फट् स्वाहा—सदा दिशाओं में मेरी रक्षा करे। ८ सुरेखोग्र-तारिणी—ॐ ह्रीं स्त्रीं आः सुरेखे हूं वज्र-रेखे ठः हूं फट् स्वाहा—पृथ्वी पर मेरी रक्षा करे।

इस प्रकार आठ कुल्लुका-मन्त्रों का न्यास कर शरीर के मूल स्थानों में ८४ भेदों का न्यास करे।

सूचना—पृष्ठ १४ की पाँचवीं पंक्ति तक प्रस्तुत कवच की पूर्व-पीठिका का हिन्दी-रूपान्तर यहाँ दिया गया है। उसके बाद पृष्ठ २१ तक मन्त्रात्मक कवच है, जो अनुभवी साधक सहज ही समझ कर पाठ कर सकते हैं। अन्तिम भाग में फल-श्रुति है, जिसका सारांश निम्न प्रकार है—

फल-श्रुति

भैरवी, सुन्दरी, काली, मातङ्गी, छिन्न-मस्ता और नील-सरस्वती—इन छः मन्त्रों की शक्ति से सभी मन्त्रों की शक्ति सदा जाग्रत् करनेवाली भगवती मेरी रक्षा करे। यह देवों के लिये भी दुर्लभ 'कवच' कहा गया है।

ब्रह्म-मन्त्र-स्वरूपवाला यह 'त्रैलोक्य-विजय' नामक कवच है। उग्रतारा का ध्यान करते हुये इस कवच से युक्त होकर जो मूलाधार में विद्यमान् परा-शक्ति को षडङ्गों के सहित अपने मूर्ध्नि में ले जाकर परानन्द से मिलाता है और उसके तेज से अपनी आत्मा को अभिन्न अनुभव करता है तथा यह कहता है कि—'मैं शिव हूं, मैं भैरव हूं, मैं नित्य आनन्द-मय हूं, मैं अव्यय हूं, मैं शत्रुओं का नाशक हूं, मैं महोग्र-तारिणी हूं, मैं सर्व-शक्ति-मय ब्रह्म-रूप हूं, मैं तारिणी-मय हूं'—उसे निश्चय ही सिद्धि प्राप्त होती है।

महोग्रतारा के इस दिव्य कवच का जो पाठ करता है, उसे बिना पुरश्चरण किए ही शीघ्र सिद्धि मिलती है। आठों सिद्धियां उसके हाथ में रहती हैं और धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष चारों का वह अधिकारी होता है, इसमें सन्देह नहीं। जो स्त्री भाग्य-वश इस महत् कवच को धारण करती है, वह दिव्य पुत्रों को पाती है, अतुल सौभाग्य, वैभव, स्वास्थ्य और सुख-भोग पाकर साक्षात् देवी-रूप होती है। इस कवच को यत्न-पूर्वक गुप्त रखे।

[६]

त्रैलोक्य-मोहनं श्रीतारा-कवचम्

देव्युवाच—

तारा-पूजा श्रुता नाथ! विद्याश्च सकलास्ततः । साम्प्रतं श्रोतुमिच्छामि कवचं मन्त्र-विग्रहं ।।
त्रैलोक्य-मोहनं नाम सर्वापद्-विनिवारकं । पूर्वत्र सूचितं नाथ ! कृपया मे प्रकाशय ।।

ईश्वर उवाच—

देव-दानव-विद्या-धृक् पूजिते प्राण-वल्लभे । त्रैलोक्य-मोहनं नाम कवचं श्रूयतां परं ।।
सर्व-विद्या-मयं देवि ! सर्व-मन्त्र-मयं ध्रुवं । सर्व-रक्षा-करं देवि ! सिद्धि-विद्या-प्रदायकं ।।
वेद-व्यासोऽपि यद् धृत्वा सर्वज्ञः पठनाद् यतः । यद् धृत्वा पठनादीशस्त्रैलोक्य-विजयी प्रभुः ।।
धनाधिपः कुबेरोऽपि देवाधिपः शची-पतिः । पठनाद् धारणात् सत्यं यतः सर्वे दिगीश्वराः ।।
सर्व-सिद्धि-युताः सन्तः सर्वैश्वर्यमवाप्नुयुः । यस्य प्रसादादीशोऽहं भैरवानां महेश्वरि ।।
क्रोधाधिपो महा-भीमो देवेषु पृथितः प्रभुः । न दद्यात् पर-शिष्येभ्यो दद्याच्छिष्येभ्य एव हि ।।

विनियोग—अस्य त्रैलोक्य-मोहन-कवचस्य श्रीशिवः ऋषिः । विराट् छन्दः । श्रीउग्रतारा देवता । धर्मार्थ-काम-मोक्ष-सिद्ध्यर्थे पाठे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीशिव-ऋषये नमः शिरसि । विराट्-छन्दसे नमः मुखे । श्री उग्रतारा-देवतायै नमः हृदि । धर्मार्थ-काम-मोक्ष-सिद्ध्यर्थे पाठे विनियोगाय नमः अञ्जलौ ।

ॐ ह्रीं स्त्रीं मे शिरः पातु हूं फट् पातु ललाटकं, सार्द्ध-पञ्चाक्षरी तारा पायान्नेत्र-युगं मम ।।
ॐ ह्रीं स्त्रीं हूं श्रुती पातु नमः पातु च नासिकां, तारा षडक्षरी पायाद् वदनं मुण्ड-भूषणा ।।
ह्रीं स्त्रीं हूं च फट् वदनं जिह्वां पायान्महेश्वरी, ह्रीं स्त्रीं हूं मे गलं पातु सापि नील-सरस्वती ।।
स्त्रीं स्कन्धौ पातु नियतं तारैकाक्षर-रूपिणी, हूं घाटां सा सदा पातु बीजैकाक्षर-रूपिणी ।।
ऐंह्रींस्त्रींहूं च फट् पायाद्वाक्तारा मे भुज-द्वयं, श्रींह्रींस्त्रींहूं च फट् पायात् श्रीतारा मे स्तनद्वयं
ह्रींह्रींस्त्रींहूं च फट् माया तारा च हृदयं मम, हूंह्रींस्त्रीं हूं च फट् बीजं तारा पृष्ठं सदावतु
क्लींह्रींस्त्रींहूं च फट् पायात् पार्श्वौ काम-स्वरूपिणी, ॐह्रींस्त्रींहूं नमः पायात्कुक्षिं महा-षडक्षरी
ऐंसौःॐ ऐंह्रीं फट् स्वाहा कटि-देशं सदावतु, अष्टाक्षरी महा-विद्या साक्षाद् ब्रह्म-स्वरूपिणी
खं हूं ह्रौं ॐ ऐं ल्रीं ह्रीं सः गुह्य-देशं सदावतु, सप्ताक्षरी चोग्रतारा मूल-विद्या-स्वरूपिणी ।
ॐ ह्रीं हां हूं नमस्तारायै हूं सकल-पदं ततः । दुस्तरं तारय पदं तारय प्रणव-द्वयं ।।
स्वाहेति च महा-विद्या जानुनी सर्वदावतु । ऐंसौंॐऐं क्लीं फट् स्वाहा जंघे पातु पराम्बिका ।।

ॐ ह्रीं स्त्रीं हूं च फट् तारा हंसाद्यन्ता नवाक्षरी । महोग्रतारा पादौ मे पातु नित्यं महेश्वरी ॥
ऐंह्रींस्त्रीं ह्सौः स्सौः वद वद वाग्वादिनीति च । काम-बीज-त्रयं नील-सरस्वती-स्वरूपकं ॥
ऐंऐंऐं काहि काहि कलरीं स्वाहेति च पार्वति ! चतुस्त्रिंशल्लिपि-मयी पातु ताराखिलं वपुः ॥
इन्द्रो वामाक्षि-युक् पृथ्वी सरस्वत्यनल-प्रिया । कूर्चाद्यन्ता पातु चोर्ध्वं मूल-विद्या दशाक्षरी ॥
तारं माया वधूः कूर्चं कालिका कमला ततः । उग्रतारे भगं कामः परा लक्ष्मी शिवांकुशौ ॥
सा महा-षोडशी प्रोक्ता तारा-देव्या मयाधुना । विधिवद् गृह्णात् तस्यामृत्युं मृत्यु-पथं नयेत् ॥
एषा विद्या महा-गुप्ता तन्त्रादि-यामलेषु च । साम्प्रतं कथिता तुभ्यं कवचाङ्गतया प्रिये ॥
इति ते कथितं देवि ! गुह्यातरं परं । त्रैलोक्य-मोहनं नाम कवचं मन्त्र - विग्रहं ॥

फल-श्रुति

ब्रह्म-विद्या-मयं भद्रे ! केवलं ब्रह्म-रूपिणं । मन्त्र-विद्या-मयं चैव कवचं मन्मुखोदितं ॥
गुरुमभ्यर्च्य विधिवत् कवचं प्रपठेद् यदि । त्रिः सकृद् वा यथा-ज्ञानं भैरवस्तत्क्षणाद् भवेत् ॥
सर्व-पाप-विनिर्मुक्तः कुल-कोटीः समुद्धरेत् । गुरुः स्यात् सर्व-विद्यानामधिकारी जपादिषु ॥
शतमष्टोत्तरं चास्य पुरश्चर्या-विधिः स्मृतः । शतमष्टोत्तरं जप्त्वा भवेद् भूमि-पुरन्दरः ॥
त्रैलोक्यं विचरेद् धीरो गणनाथो यथा गुहः । गद्य-पद्य-मयी वाणी भवेद् गङ्गा-प्रवाह-वत् ॥
पुष्पाञ्जल्यष्टकं दत्वा मूलेनैव पठेत् सकृत् । पञ्च-वर्ष-सहस्राणां पूजायाः फलमाप्नुयात् ॥
भूर्जे विलिख्य गुलिकां स्वर्णस्थां धारयेद् यदि । पुरुषो दक्षिणे बाहौ योषिद् वाम-भुजे तथा ॥
बहु-पुत्रवती नारी पुरुषो बहु-पुत्रवान् । सर्व-सिद्धि-युतो भूत्वा विचरेद् भैरवो यथा ॥
तद् गात्रं प्राप्य शस्त्राणि ब्रह्मास्त्रादीनि भैरवि! माल्यानि कुसुमान्येव भवन्ति सुखदानि च ॥
तस्य गेहे स्थिरा लक्ष्मीर्वाणी वक्त्रे वसेद् ध्रुवं । इदं कवचमज्ञात्वा तारां यो जपतेऽधमः ॥
अल्पायुर्निर्धनो मूर्खो भवत्येव न संशयः ।

॥ श्रीतारा-कल्पे त्रैलोक्य-मोहनं नाम तारा-कवचं सम्पूर्णम् ॥

हिन्दी रूपान्तर

त्रैलोक्य-मोहन श्रीतारा-कवच

श्री देवी ने कहा—हे नाथ ! तारा की पूजा-विधि मैंने सुनी । फिर अन्य विद्याओं के सम्बन्ध में सुना। अब मैं उनके पूर्वोक्त मन्त्रात्मक कवच को, जिसका नाम त्रैलोक्य-मोहन है और जो सब आपत्तियों को दूर करनेवाला है, सुनना चाहती हूँ । कृपया उसे स्पष्ट करें ।

श्री ईश्वर ने कहा—हे देवि ! त्रैलोक्य-मोहन कवच को सुनो, जो सब विद्याओं और मन्त्रों से युक्त है तथा सब प्रकार से रक्षा करनेवाला एवं सिद्धि-विद्या का देनेवाला है । उसे धारण कर पाठ करने से वेदव्यास सर्वज्ञ ईश्वर, त्रैलोक्य-विजयी प्रभु, कुबेर धन के स्वामी और इन्द्र देवों के राजा हुये तथा सभी दिगीश्वरों ने सर्व-सिद्धि-सम्पन्न होकर समस्त ऐश्वर्यों को प्राप्त किया । उसी के फल से मैं भैरवों का ईश्वर हूं । इस कवच को अपने ही शिष्य को प्रदान करना चाहिये, दूसरे के शिष्यों को नहीं ।

विनियोग—इस त्रैलोक्य-मोहन कवच के ऋषि श्रीशिव, छन्द विराट्, देवता श्रीउग्रतारा और विनियोग धर्म—अर्थ—काम—मोक्ष की सिद्धि के लिये पाठ करने में है ।

ऋष्यादि-न्यास—शिर में श्रीशिव ऋषि को नमस्कार, मुख में विराट् छन्द को नमस्कार, हृदय में श्रीउग्रतारा देवता को नमस्कार, अञ्जलि में धर्मार्थ-काम-मोक्ष के सिद्धि के लिए पाठ के विनियोग को नमस्कार ।

सूचना—पृष्ठ २४ पर ऋष्यादि-न्यास के बाद कवच-स्तोत्र का प्रारम्भ होता है, जो पृष्ठ २५ पर पूर्ण होता है । उसका पाठ करे, अर्थ स्पष्ट हीं है ।

फल-श्रुति—यह मन्त्रात्मक त्रैलोक्य-मोहन कवच ब्रह्म-विद्या-मय होने से ब्रह्म-स्वरूप ही है । गुरु का अर्चन कर प्रतिदिन एक बार तीनों काल में इसका पाठ करने से पाठ-कर्ता भैरव-स्वरूप हो जाता है । वह सभी विद्याओं का अधिकारी होता है । इसका पुरश्चरण १०८ बार के पाठ से होता है । पुष्पाञ्जलि आठ बार देकर पाठ करे । भूर्ज-पत्र में इसे लिखकर स्वर्ण-गुटिका में रख यदि पुरुष दाईं भुजा में और स्त्री बाईं भुजा में धारण करे, तो अनेक पुत्रों और सब सिद्धियों का लाभ होता है । घर में सदा लक्ष्मी का और वाणी में सदा सरस्वती का वास होता है । इस कवच को जाने बिना भगवती तारा के मन्त्र का जो जप करता है, वह अल्पायु, निर्धन और मूर्ख होता है ।

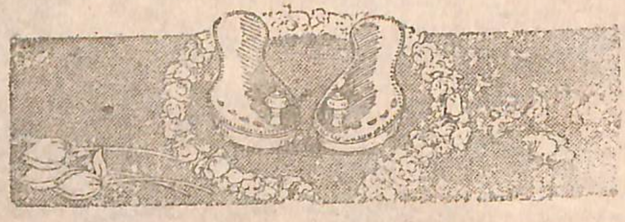

[७]

श्रीउग्रतारा-हृदयम्

श्रीशिव उवाच—

श्रृणु पार्वति ! भद्रं ते लोकानां हित-कारकं। कथ्यते सर्वदा गोप्यं तारा-हृदयमुत्तमम् ॥

श्रीपार्वती उवाच---

स्तोत्रं कथं समुत्पन्नं कृतं केन पुरा प्रभो ! कथ्यतां सर्व-सद्-वृत्तं कृपां कृत्वा ममोपरि ॥

श्रीशिव उवाच---

रणे देवासुरे पूर्वं कृतमिन्द्रेण सुप्रिये ! दुष्ट - शत्रु - विनाशार्थं बल - वृद्धि - यशस्करं ॥

विनियोग---ॐ अस्य श्रीमदुग्रतारा-हृदय-स्तोत्र-मन्त्रस्य श्रीभैरव ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्रीमदुग्रतारा देवता। स्त्रीं बीजं। हूँ शक्तिः। नमः कीलकं। सकल-शत्रु-विनाशार्थे पाठे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास---श्रीभैरव-ऋषये नमः शिरसि। अनुष्टुप्-छन्दसे नमः मुखे। श्रीमदुग्र-तारा-देवतायै नमः हृदि। स्त्रीं-बीजाय नमः गुह्ये। हूं-शक्तये नमः नाभौ। नमः कीलकाय नमः पादयोः। सकल-शत्रु-विनाशार्थे पाठे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

कर व षडङ्ग-न्यास—ॐ स्त्रीं अंगुष्ठाभ्यां'''हृदयाय नमः। ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां''' शिरसे स्वाहा। ॐ हूं मध्यमाभ्यां'''शिखायै वषट्। ॐ त्रीं अनामिकाभ्यां'''कवचाय हुँ। ॐ ऐं कनिष्ठाभ्यां'''नेत्र-त्रयाय वौषट्। ॐ हंसः करतल-करपृष्ठाभ्यां...अस्त्राय फट्।

ध्यान----ध्यायेत् कोटि - दिवाकर - द्युति - निभां बालेन्दु - युक् - शेखरां।
रक्ताङ्गीं रसनां सुरक्त - वसनां पूर्णेन्दु - बिम्बाननाम् ॥
पाशं कर्त्रि - महांकुशादि दधतीं दोर्भिश्चतुर्भिर्युतां।
नाना - भूषण - भूषितां भगवतीं तारां जगत् - तारिणीं ॥

तारिणी तत्त्व-निष्ठानां सर्व-तत्त्व-प्रकाशिका। रामाभिन्ना परा-शक्तिश्शत्रु-नाशं करोतु मे ॥
सर्वदा शत्रु-संरम्भे तारा मे कुरुतां जयं। स्त्रीं त्रीं - स्वरूपिणी देवी त्रिषु लोकेषु विश्रुता ॥
तव स्नेहान्मया ख्याता न पशून् प्रकाश्यतां। श्रृणु देवि! तव स्नेहात् तारा-नामानि तत्त्वतः ॥
वर्णयिष्यामि गुप्तानि दुर्लभानि जगत्-त्रये। तारिणी तरला तारा त्रि-रूपा तरणि-प्रभा ॥
सत्व-रूपा महा-साध्वी सर्व-सज्जन-पालिका। रमणीया रजोरूपा जगत्-सृष्टि-करी परा ॥

तमो-रूपा महा-माया घोर-रावा भयानका । काल-रूपा कालिकाख्या जगद्-विध्वंस-कारिका ॥
तत्त्व-ज्ञान-परानन्दा तत्व-ज्ञान-प्रदाऽनघा । रक्ताङ्गी रक्त-वस्त्रा च रक्त-माल-प्रशोभिता ॥
सिद्धि-लक्ष्मीश्च ब्रह्माणी महा-काली महा-लया । नामान्येतानि ये मर्त्याः सर्वदैकाग्र-मानसाः ॥
प्रपठन्ति प्रिये ! तेषां किङ्करत्वं करोम्यहं । तारां तार-परां देवीं तारकेश्वर-पूजितां ॥
तारिणीं भव-पाथोधेरुग्रतारां भजाम्यहं । स्त्रीं ह्लीं हूं त्रीं फट् मन्त्रेण जलं जप्त्वाभिषेचयेत् ॥
सर्वे रोगाः प्रणश्यन्ति सत्यं सत्यं वदाम्यहं । त्रीं स्वाहान्तैर्महा-मन्त्रैश्चन्दनं साधयेत् ततः ॥
तिलकं कुरुते प्राज्ञो लोको वश्यो भवेत् प्रिये! स्त्रींह्लींत्रीं स्वाहा-मंत्रेण श्मशान-भस्म मंत्रयेत् ॥
शत्रोर्गृहे प्रति क्षिप्त्वा शत्रोर्मृत्युर्भविष्यति । ह्लींहूंस्त्रीं फडन्त-मन्त्रैः पुष्पं संशोध्य सप्तधा ॥
उच्चाटनं भवत्याशु रिपूणां नैव संशयः । स्त्रींत्रींह्लीं मन्त्र-वर्येण अक्षताश्चाभिमन्त्रिताः ॥
तत्प्रति क्षेप-मात्रेण शीघ्रमायाति मानिनी । हंसः ॐह्लींस्त्रींहूं हंसः शोधितं कज्जलं प्रिये ॥
तस्यैव तिलकं कृत्वा जगन्मोहं समाचरेत् । तारायाः हृदयं देवि ! सर्व-पाप-प्रणाशनं ॥
वाजपेयादि-यज्ञानां कोटि-कोटि-गुणोत्तरं । गङ्गादि-सर्व-तीर्थानां फलं कोटि-गुणं स्मृतं ॥
महा-दुःखे महा-रोगे सङ्कटे प्राण-संशये । महा-भये महा-घोरे पठेत् स्तोत्रं महोत्तमं ॥
सत्यं सत्यं मयोक्तं ते पार्वति ! प्राण-वल्लभे ! गोपनीयं प्रयत्नेन न प्रकाश्यमिदं क्वचित् ॥

॥ श्रीभैरवी-तन्त्रे शिव-पार्वति-संवादे श्रीमदुग्रतारा-हृदयं सम्पूर्णं ॥

हिन्दी रूपान्तर

श्रीमदुग्रतारा-हृदय-स्तोत्र

श्रीशिव ने कहा—हे पार्वति ! संसार का कल्याण करनेवाले, शुभ एवं श्रेष्ठ 'तारा-हृदय' को कहता हूँ । यह सदा गोपनीय है ।

श्रीपार्वती ने कहा—हे प्रभो ! पहले यह स्तोत्र किसके द्वारा और क्यों किया गया ? मुझ पर कृपा कर सारा वर्णन कहिये ।

श्रीशिव ने कहा—हे प्रिये ! पहले-पहल देवासुर-संग्राम के समय दुष्ट शत्रुओं के नाश के लिये इन्द्र द्वारा बल-वृद्धि और यश देनेवाले इस स्तोत्र को किया गया ।

विनियोग—इस श्रीउग्रतारा-हृदय-स्तोत्र के ऋषि भैरव, छन्द अनुष्टुप्, देवता श्रीउग्रतारा, बीज स्त्रीं, शक्ति हूं, कीलक नमः और विनियोग सभी शत्रुओं के विनाश हेतु पाठ में है ।

ऋष्यादि-न्यास—शिर में भैरव को नमस्कार, मुख में अनुष्टुप् छन्द को नमस्कार, हृदय में श्रीउग्रतारा देवता को नमस्कार, गुह्य में 'स्त्रीं' को नमस्कार, नाभि में 'हूं' शक्ति को नमस्कार, पैरों में 'नमः' कीलक को नमस्कार और अञ्जलि में सभी शत्रुओं के विनाश हेतु पाठ में विनियोग के लिये नमस्कार ।

पृष्ठ २७ लिखे अनुसार कर व षडङ्ग-न्यास कर ध्यान करे—

ध्यान—जगत् से तारनेवाली भगवती तारा का ध्यान करता हूँ। उनके शरीर को आभा करोड़ सूर्यों की चमक के समान है। उनके मस्तक पर बाल-चन्द्र शोभित है। रक्तवर्णा जिह्वा है और सुन्दर लाल वस्त्र धारण किये हैं। मुख उनका पूर्ण चन्द्र के समान उज्ज्वल है। चार हाथों में पाश, कैंची, अंकुश और खड्ग लिये हैं। विविध प्रकार के अलङ्कारों से वे विभूषिता हैं।

तत्त्व-परायण साधकों को सभी तत्वों का बोध करानेवाली, ब्रह्म से अभिन्न परा शक्ति तारिणो मेरे शत्रुओं का नाश करे। शत्रुओं के समूह में तारा सदा मुझे जिताये। 'स्त्रीं त्रीं' स्वरूपवाली देवी त्रिलोक में प्रसिद्ध है। तुम्हारे स्नेह से मैंने वर्णन किया है। पशु-भाववालों के सामने इसे प्रकट न करे। अब तारा के नामों को सुनो, जो तीनों लोक में गुप्त और दुर्लभ हैं।

१ तारिणी, २ तरला, ३ तारा, ४ त्रि-रूपा, ५ तरणि-प्रभा, ६ सत्व-रूपा, ७ महा-साध्वी, ८ सर्व-सज्जन-पालिका, ९ रमणीया, १० रजो-रूपा, ११ जगत्-सृष्टि-करी, १२ परा, १३ तमोरूपा, १४ महा-माया, १५ घोर-रावा, १६ भयानका, १७ काल-रूपा, १८ कालिका, १९ जगद्-विध्वंस-कारिका, २० तत्त्व-ज्ञान-परानन्दा, २२ अनघा, २३ रक्ताङ्गी, २४ रक्त-वस्त्रा, २५ रक्त-माल-प्रशोभिता, २६ सिद्ध-लक्ष्मी, २७ ब्रह्माणी, २८ महा-काली, २९ महा-लया—इन नामों को जो मनुष्य एकाग्र-मन से सदा पढ़ते हैं, उनका मैं सेवक बन जाता हूँ।

'तारां तार-परां देवीं तारकेश्वर-पूजितां, तारिणीं भव-पाथोधेरुग्रतारां भजाम्यहं। स्त्रीं ह्रीं हूं फट्'—इस मन्त्र को जल पर जप कर उससे रोगी का अभिषेक करे, तो उसके सभी रोग नष्ट हो जाते हैं, यह मैं सर्वथा सत्य कहता हूँ।

उक्त महा-मन्त्र के अन्त में 'त्रीं स्वाहा' लगाकर उसे जपते हुये चन्दन प्रस्तुत करे और उससे तिलक लगाये तो सारा संसार वशीभूत होता है।

'स्त्रीं ह्रीं त्रीं स्वाहा' मन्त्र से श्मशान को भस्म को अभिमन्त्रित कर शत्रु के घर में फेंके, तो उसकी मृत्यु होती है।

'ह्रीं हूं स्त्रीं फट्' मन्त्र से सात बार अभिमन्त्रित पुष्पों द्वारा शत्रुओं का शीघ्र उच्चाटन होता है, इसमें संदेह नहीं।

'स्त्रीं त्रीं ह्रीं' मन्त्र से अभिमन्त्रित अक्षतों के फेंकने से रूठी स्त्री शीघ्र आती है।

'हंसः ॐ ह्रीं स्त्रीं हूँ हंसः' से शोधित कज्जल का तिलक लगाने से जगत् का मोहन होता है।

हे देवि ! तारा का यह हृदय-स्तोत्र सब पापों का नाशक है, वाजपेय आदि यज्ञों और गङ्गादि सभी तीर्थों से कोटि गुना अधिक फल देनेवाला है। महान् दुःख, महान् रोग, प्राणों का सङ्कट होने पर इस श्रेष्ठ स्तोत्र का पाठ करे। यह मैं सर्वथा सत्य कहता हूँ। हे प्राण-प्रिये पार्वति ! इसे गुप्त रखे, कभी प्रकट न करे।

[८]

श्रीताराष्टक-स्तोत्रं

ॐ मातर्नील - सरस्वति ! प्रणमतां सौभाग्य-सम्पत्प्रदे !
प्रत्यालीढ - पद - स्थिते शव - हृदि स्मेराननाम्भोरुहे ॥
फुल्लेन्दीवर - लोचन - त्रय - युते कर्त्रीं कपालोत्पले,
खड्गं चादधती त्वमेव शरणं त्वामीश्वरीमाश्रये ॥ १

वाचामीश्वरि भक्त-कल्प-लतिके ! सर्वार्थं - सिद्धीश्वरि !
गद्य - प्राकृत - पद्य - जात - रचना - सर्वार्थ - सिद्धि - प्रदे ॥
नीलेन्दीवर - लोचन - त्रय-युते ! कारुण्य-वारां निधे !
सौभाग्यामृत - वर्षणेन कृपया सिञ्च त्वमस्मादृशम् ॥ २

खर्वे ! गर्व - समूह - पूरित - तनो ! सर्पादि-वेशोज्ज्वले !
व्याघ्र-त्वक् - परिवीत - सुन्दर-कटि - व्याधूत-घण्टाङ्किते ॥
सद्यःकृत्त - गलद्रक्तः - परिमिलन्मुण्ड - द्वयी मूर्द्धजे !
ग्रन्थि - श्रेणी - नृमुण्ड - दाम - ललिते भीमे! भयं नाशय ॥ ३

मायानङ्ग-विकार - रूप - ललना - विन्द्वर्ध - चन्द्रात्मिके !
हूं - फट्कार - मयि ! त्वमेव शरणं मन्त्रात्मिके ! मादृशः ॥
मूर्तिस्ते जननि ! त्रिधाम - घटिता स्थूलाति - सूक्ष्मा परा ।
वेदानां नहि गोचरा कथमपि प्राज्ञैर्नुतामाश्रये ॥ ४

त्वत् - पादाम्बुज - सेवया सुकृतिनो गच्छन्ति सायुज्यतां ।
तस्या श्रीपरमेश्वर - हरि-हर - ब्रह्मादि - साम्यात्मनः ॥
संसाराम्बुधि - मज्जने पटु - तनून् देवेन्द्र - मुख्यान् सुरान् ।
मातस्त्वत्-पद-सेवने हि विमुखान् किं मन्द - धीः सेवते ॥ ५

मातस्त्वत्-पद - पङ्कज - द्वय - रजोमुद्राङ्क - कोटीरिणः ।
ते देवासुर - सङ्गरे विजयिनो निःशङ्कमंके गताः ॥
देवोऽहं भुवने न मे सम इति स्पर्द्धां वहन्तः पराः ।
तत्-तुल्या नियतं यथा शुचिरवी नाशं व्रजन्ति स्वयम् ॥

त्वन्नाम - स्मरणात् पलायन - परा द्रष्टुं च शक्ता न ते ।
भूत - प्रेत - पिशाच - राक्षस - गणा यक्षाश्च नागाधिपाः ॥
दैत्या दानव - पुङ्गवाश्च खचरा व्याघ्राधिका जन्तवो ।
डाकिन्यः कुपितान्तकश्च मनुजं मातः क्षणं भू-तले ॥
लक्ष्मीः सिद्धि-गणाश्च पादुक-मुखाः सिद्धास्तथा वैरिणां ।
स्तम्भश्चापि वराङ्गने गज - घटा - स्तम्भस्तथा मोहनम् ॥
मातस्त्वत्-पद-सेवया खलु नृणां सिध्यन्ति ते ते गुणाः ।
क्लांतः कांत - मनोभवश्च भवति क्षुद्रोऽपि वाचस्पतिः ॥

फल-श्रुति

ताराष्टकमिदं पुण्यं भक्ति - मान् यः पठेन्नरः ।
प्रातर्मध्याह्न - काले च सायाह्ने नियतः शुचिः ॥
लभते कवितां दिव्यां सर्व - शास्त्रार्थ - विद् भवेत् ।
लक्ष्मीमनश्वरां प्राप्य भुक्त्वा भोगान् यथेप्सितान् ॥
कीर्तिं कान्तिं च नैरुज्यं सर्वेषां प्रियतां व्रजेत् ।
विख्यातिं चापि लोकेषु प्राप्यान्ते मोक्षमाप्नुयात् ॥

॥ नील-तन्त्रे श्रीताराष्टकं स्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

हिन्दी रूपान्तर

श्रीताराष्टक-स्तोत्र

प्रणाम करनेवाले भक्तों को सौभाग्य-सम्पत्ति देनेवाली, भगवान् शिव को छाती पर दायाँ पैर रखकर खड़ी होनेवाली, मुस्कान-युक्त कमल-मुखी, खिले हुये नील-कमल-सम तीन नेत्रोंवाली, कैंची, नर-कपाल, नील-कमल और खड्ग धारण करनेवाली हे नील-सरस्वति माँ ! मैं तुम सर्वेश्वरी की शरण का आश्रय लेता हूँ ॥१॥

वाणी की ईश्वरी, भक्तों के लिये कल्प-लता, सभी कामनाओं की सिद्धि देनेवाली, गद्य-पद्य-रचना एवं सर्वज्ञता की सिद्धि-दायिनी, नील-कमल-वत् सुन्दर तीन नेत्रोंवाली, दया-सागरा हे मां ! तुम कृपाकर मुझ जैसे भक्त को सौभाग्यामृत से सींच दो ॥२॥

छोटे शरीरवाली, सभी प्रकार के गर्व से पूर्णा, सर्पादि वेश से उज्ज्वला, व्याघ्राम्बर से शोभित सुन्दर कटि में बँधी घण्टियों से मधुर शब्द करनेवाली, तत्काल कटे और रक्त बहते हुये दो नर-मुण्डों को परस्पर गले मिलाकर धारण करनेवाली, मुण्ड-माला से शोभित हे भयङ्करि मां ! मेरे भय का नाश करो ॥३॥

'ॐ स्त्रीं हूं फट्' मन्त्र-स्वरूपवाली हे मां ! मेरे जैसे भक्त को तुम्हीं शरण हो। हे मां ! तुम्हारा विग्रह स्थूल, सूक्ष्म और पर तीनों धाम से बना है। वेदों से भी उसका ज्ञान किसी प्रकार नहीं होता। विशेष ज्ञानियों द्वारा नमस्कृता तुम्हारा मैं आश्रय लेता हूँ ॥४॥

तुम्हारे चरण-कमलों की सेवा से पुण्यात्मा लोग सायुज्य मुक्ति को पाते हैं और ब्रह्मा-विष्णु-महेश के समान होते हैं। संसार-सागर में डूबने में चतुर इन्द्र-प्रमुख देवताओं की, जो तुम्हारी चरण-सेवा से विमुख हैं, कौन मन्द-बुद्धि सेवा करता है ? अर्थात् कोई बुद्धिमान् तुम्हें छोड़ अन्य देवों की उपासना नहीं करता ॥५॥

हे मां ! तुम्हारे दोनों चरण-कमलों की धूलि जिन देवों के मुकुटों पर अङ्कित है, वे देवासुर-संग्राम में विजयी होकर तुम्हारी गोद में निश्चित होकर रहते हैं। 'मैं देवता हूँ, त्रिभुवन में मेरे समान कोई नहीं है'—ऐसी स्पर्द्धावाले भेड़ों के समान स्वयं ही विनष्ट हो जाते हैं ॥६॥

हे मां ! तुम्हारे नाम के स्मरण मात्र से भूत-प्रेत-पिशाच-राक्षसों के समूह और यक्ष, नाग, दैत्य, दानव, खेचर, व्याघ्रादि पशु, डाकिनी तथा क्रुद्ध यम भी भाग खड़े होते हैं, तुम्हारे भक्त की ओर देख तक नहीं सकते अर्थात् उन्हें कुछ भी हानि नहीं पहुँचा सकते ॥७॥

हे मां ! तेरे चरण-कमलों की सेवा से मनुष्यों को सभी गुणों की सिद्धि निश्चय ही मिल जाती है—लक्ष्मी-सिद्धि, सर्व-सिद्धियाँ, पादुकादि सिद्धियाँ, शत्रु-स्तम्भन, गज-समूह-स्तम्भन, सम्मोहनादि सिद्धियाँ प्राप्त होकर मनुष्य कामदेव से भी बढ़ जाता है। साधारण मनुष्य भी वृहस्पति के समान पूजनीय विद्वान् हो जाता है ॥८॥

फल-श्रुति

जो भक्त मनुष्य इस पवित्र ताराष्टक को प्रातः, मध्याह्न और सायं तीनों काल में पवित्र होकर नियमित रूप से पढ़ता है, वह कवित्व-शक्ति प्राप्त कर सब शास्त्रों का जाननेवाला विद्वान् बन जाता है और अक्षय सम्पत्ति को पाकर, यथेच्छ भोगों का भोग कर कीर्ति, कान्ति, आरोग्यादि से सम्पन्न होकर सबका प्रिय होता है तथा तीनों लोकों में यश पाकर अन्त में मोक्ष-लाभ करता है।

[६]

श्रीतारा-कर्पूर-स्तोत्रं

श्रीकण्ठामर - केश - वर्ण - घटितं चन्द्रार्द्ध - विन्दूज्ज्वलं,
वीजं यत् - परमं गुण - त्रय - मयं काम - प्रदं मुक्तिदम् ।
मातः ! शङ्कर - वल्लभे ! प्रति - दिनं ध्यायन्ति ये ये सदा,
ते ते यान्ति चिदात्मकं हरि - हर - ब्रह्मादि - साम्यं मुदा ॥ १ ॥

व्योमार्णं वाम - नेत्रान्वितमनल - युतं विन्दु - चन्द्रार्ध - युक्तं,
वीजं ते गुह्यमेतत् त्रिभुवन -जननि ! त्रि-क्षणे ये जपन्ति ।
तेषां वक्त्रारविन्दे विहरति मधुरा गद्य - पद्यावली गी—
र्मातश्चन्द्रार्ध-चूडे ! सकल-भय-हरे ! सिद्धि-भाजां नराणां ॥ २ ॥

शुक्रार्णं पूतनास्थं कलित-शशि - कला-विन्दु - भूषं सवह्नि—
भ्राजद् वामाक्षि-युक्तं जननि ! तव बधू-वीजमेतज्जपन्ति ।
ते ते लोलेक्षणानां विगलित - रसना - पीन - वक्षोज - वासः,
केशानां चित्तमाशु स्मर-हर-महिले ! मोहयन्ति प्रकामम् ॥ ३ ॥

ईशानं वाम-कर्णोल्लसित-शशि-कला-विन्दु-युक्तं प्रगृह्यं,
वीजं मातस्त्वदीयं यदि जपति जनो वारमेकं जडात्मा ।
चञ्चत्-पञ्चाशदुग्र-ग्रथित-नर-शिरो मालिका-क्रान्त-कण्ठे !
मातः ! शैलेन्द्र-पुत्रि! त्रिभुवनमपि संक्षोभयत्येव शीघ्रम् ॥ ४ ॥

पश्चादस्त्रं तदन्यत् पुर - हर - महिले ! वीजमत्यन्तगुह्यम् ।
भालोद्यत् - पञ्च - मुद्रे! प्रकट-विकट-दंष्ट्रोग्र-वक्त्रारविन्दे !
नित्यं ये भावयन्ति प्रति - दिनममले ! घोर - रूपाट्टहासे !
ते नूनं भ्रामयन्ति त्रि-जगदघ-हरे ! चक्र-वद् विश्वमेतत् ॥ ५ ॥

माया-स्त्री-कूर्च-वीजैर्नव-तपन-हरित् सार्द्ध-चन्द्रांशुवर्णे !
मातर्नीलाख्यमेतत् तव मनुमनिशं ये प्रकामं जपन्ति ।
वित्ते वित्तेश-तुल्याः सुर-गुरु-सदृशास्तर्क - काव्यागमादौ,
ते ते नीलाम्बुदाली-रुचि-रुचिर-तनो ! काम-रूपा भवन्ति ॥ ६ ॥

भवान्येभिर्वीजैर्हिम - गिरि - सुते ! चास्त्र - सहितै—
र्निगूढं ये मातस्तव मनुं जपन्त्येक - जटिले !
त्रि - यामा - नाथार्ध - प्रविलसित - भाले ! त्रि - नयने !
गृहे तेषां नित्यं निवसति मुदा सिन्धु - तनया ॥ ७ ॥

अमीभिर्वीजैस्ते प्रणव - सहितैः शैल - तनये !
निज - स्वान्ते सास्त्रं परि - जपति पञ्चाक्षरमिति ॥
स सिद्धः स त्यागी स तु पुर - हरोऽसौ मुर - हरः ।
स धाताऽसौ मुक्तो भवति हि चिदानन्द - रसिके ॥ ८ ॥

शवासीनां कण्ठे कलित - नृ - करीटीं कर - लसत् ।
कपालासि - श्यामोत्पल - रुचिर - कर्त्रीं त्रि - नयनाम् ॥
नवाम्भोद - श्यामां विकट - रद - भीमां पृथु - कुचां ।
सदैव त्वां ध्यायन् जननि ! स जडो वाक् - पति - समः ॥ ९ ॥

तटे नद्याः सिन्धोर्गिरि - शिरसि मालूर - गहने ।
श्मशाने गोष्ठे वा गिरिश - भवने शून्य - सदने ॥
हविष्याशी लक्षं प्रजपति वशी - भावन - परः ।
स सर्वज्ञो वाग्मी भवति सु - जनो पीन - जघने ॥ १० ॥

मुदा मातः ! शुद्धोदक - रुचिर - गन्धाक्त - सलिलैः ।
स्वयम्भू - पुष्प - स्रक् - कुल - तनु - भग - क्षालित - जलैः ॥
शिवे ! त्वां संध्यायन् हर - महिषि ! सन्तर्पयति यः ।
सदैव स्त्री - वृन्दं वशयति स विद्याधर - पतिः ॥ ११ ॥

जवा - पुष्पैर्विल्वैर्मरु - वकुल - मुख्यैश्च कुसुमैः ।
सुगन्धैः कर्पूरैरगरु - सहितैर्धूप - निकरैः ॥
प्रदीपैरुज्ज्वालैर्घृत - रचित - नैवेद्य - निकरै—
स्तवार्चां यः कुर्य्यात् स भवति पूज्यः क्षिति-पतेः ॥

स दूर्वाभिः पद्मैस्त्रि - मधु - ललितैः श्री - फल - दलै—
र्घृतैर्गव्यैं रक्तैः सु - कुल - भग - लिङ्गामृत - रसैः ।
त्रि-कोणे कुण्डे यो हुतवह - मुखे होम - विधिना ।
जुहोति त्वां मातः ! स भवति कवीन्द्रः क्षिति - पतिः ॥ १३ ॥

निशीथे कल्याणि ! प्रमुदित - मना या पितृ - वने ।
बलिं ते मेषाद्यैः स नर - महिषैर्वा परि - चरेत् ॥
स राजानं क्षिप्रं वशयति मृगाक्षी - समुदयं ।
त्रिलोकीं वा भूमौ स भवति नरः सत् - कवि - वरः ॥ १४ ॥
महा - पूजां मातस्तव वितनुते यस्तु मधुना ।
तथा मांसैर्मत्स्यैर्विविध - नव - मुद्रादिभिरपि ॥
वर - स्त्रीभिः सार्धं निधु - वन - विनोदेन मुदितो ।
निशीथे संसारात् स भवति विमुक्तः पशु - भयात् ॥ १५ ॥
त्रि - कोणे पीठे त्वां वर - निधु - वनासक्त - हृदयां ।
महा - कालेनोद्यत् - पुलक - निचयां स्मेर - वदनाम् ॥
स्वयं नक्तं कान्ता - रति - रस - समासक्त - हृदयो ।
मनुष्यो यो ध्यायेद् भवति शिव - तुल्यः स धरणौ ॥ १६ ॥
समुत्तुङ्गापीन - स्तन - जघन - राजत् - कुल - वधू—
व्यवाय - व्यासक्तो जपति तव भक्तो यदि मनुम् ॥
गलद् - वासः केशो जननि ! मनुजो मेदिनि - तले ।
स सिद्धीशः शक्त्या जयति सुचिरं सर्व - सुजनम् ॥ १७ ॥
भवानि ! श्रीमार्तनिज - गलित - वीर्याप्त - चिकुर—
मथ प्रेम्णा लब्ध्वा वचन - भुवनेशी - युत - मनुम् ॥
समुच्चार्य्य क्षोणी - तनय - दिवसे प्रेत - सदने ।
स दीर्घायुर्वाग्मी भवति शत - होमात् क्षिति - तले ॥ १८ ॥
अजस्रं यो मन्त्रं जपति भूमीधर - सुते !
विचिन्त्याग्रे मातः ! कुसुम - ललितं मार - भवनम् ॥
धरण्यां कन्दर्प - प्रतिम - तनु - भृतः स सकलान् ।
निजेष्टानाप्नोति प्रविशति मुदा तारिणि - पदम् ॥ १९ ॥
तमो - ग्रस्ते चन्द्रे यदि जपति लोकस्तव मनुं ।
नवम्यां वा मातर्धरणि - धर - कन्ये ! वितनुते ॥
तथा सूर्य्ये पृथ्वी - वलय - तिलकः काव्य - तरनी-
पयोधिः सिद्धीनां भवति भवनं सर्व - विदितः ॥ २० ॥

सदा पादाम्भोजे भ्रमतु हृदयं भृङ्ग इव मे।
सदा पाणि - द्वन्द्वं परिचरतु कर्णस्तव कथाम् ॥
शृणोतु त्वत् - कीर्तिं हर - महिषि! गीर्गायतु सदा।
सदा दृष्टिर्भूयाद् भवदनुचरालोकन - परा ॥ २१ ॥
कदा काले शैलेश्वर - तनु - भवे! पाद - युगलं।
मुदा द्रक्ष्ये ब्रह्म - प्रमुख - विबुधानां परिणुतम् ॥
कृपा - पारावारे! भव - जनन - भीतैक - शरणे!
शरण्ये! कारुण्यं मयि वितर दीने भगवति ॥ २२ ॥

फल-श्रुति

सदैव स्तोत्रं यः पठति मुदितः साधक - वरो।
न दारिद्र्यं तस्य प्रभवति कदाचित् क्षिति - तले ॥
त्रि - वर्गो हस्ते स्याज्जगदखिलमेतच्च वशगं।
चिरं जीवन्नन्ते जननि! लभते मोक्ष - पदवीम् ॥ २३ ॥
इदं स्तोत्रं मातः प्रपठति दिवा - रात्रिमनिशं।
स सर्वज्ञो योगीश्वर - निकर - चूडामणि - समः ॥
जडोऽपि त्वद् - रूपं जपति यदि संचिन्त्य मनसा।
त्वदग्रे भूयोच्चैः क्षिति - पति - समानः क्षिति - तले ॥ २४ ॥
महा - पुण्यं धन्यं सकल - पुरुषार्थैक - निलयं।
यशस्यं चायुष्यं सतत - भव - तापापहमिदम् ॥
रहस्यं प्राकाम्यं नहि खलु कदाचित् पशु - जने।
पठेत् पूजा - काले जननि! लभते मोक्ष - पदवीम् ॥२५॥

॥ श्रीफेत्कारिणी-तन्त्रे श्रीतारा-कर्पूर-स्तोत्रं समाप्तम् ॥

[१०]

सारस्वत-प्रद श्रीतारा-स्तोत्रम्

श्रीभैरव उवाच—अथोच्यते महा-देवि ! तारिण्या स्तवमुत्तमम् ।

घोर-रूपे ! महारावे ! सर्व-शत्रु-क्षयंकरि । भक्तेभ्यो वरदे देवि ! त्राहि मां शरणागतम् ।।१

सुरासुरार्चिते देवि ! सिद्ध-गन्धर्व-सेविते । जाड्य-पाप-हरे देवि ! त्राहि मां शरणागतम् ।।२

जटा-जूट-समायुक्ते ! लोल-जिह्वेकरालिनि । द्रुत-बुद्धि-करे देवि ! त्राहि मां शरणागतम् ।।३

सौम्य-रूपे घोर-रूपे चण्ड-रूपे नमोऽस्तु ते । सृष्टि-रूपे नमस्तुभ्यं त्राहि मां शरणागतम् ।।४

जडानां जडतां हंसि भक्तानां भक्त-वत्सले ! मूढ़तां हर मे देवि ! त्राहि मां शरणागतम् ।।५

हूं हूंकार-मये देवि ! बलि-होम-प्रिये ! नमः । उग्रतारे ! नमस्तुभ्यं त्राहि मां शरणागतम् ।।६

बुद्धि देहि यशो देहि कवित्वं देहि देहि मे । कु-बुद्धि हर मे देवि ! त्राहि मां शरणागतम् ।।७

इन्द्रादि-देव-वृन्देश-वन्दिते करुणामयि । तारे ताराधिनाथास्ये ! त्राहि मां शरणागतम् ।।८

फल-श्रुति

अष्टम्यां च चतुर्दश्यां नवम्यां यः पठेन्नरः । षण्मासैः सिद्धिमाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ।।९

मोक्षार्थी लभते मोक्षं धनार्थी लभते धनम् । विद्यार्थी लभते विद्यां तर्क-व्याकरणादिकाम् ।।१०

इदं स्तोत्रं पठेद् यस्तु सततं भक्ति-तत्परः । तस्य शत्रुः क्षयं याति महा-प्रज्ञा च जायते ।।११

पीडायां वापि संग्रामे जप्ये दाने तथा भये । य इदं पठति स्तोत्रं शुभं तस्य न संशयः ।।१२

स्तवेनानेन देवेशि ! प्रणमेद् भक्ति-भावतः । योनि-मुद्रां दर्शयित्वा वर-प्रार्थनमेव च ।।१३

स्तोत्रेणानेन देवेशि! स्तुत्वा देवीं सुरेश्वरीं । सर्वान् कामानवाप्नोति सर्व-विद्या-निधिर्भवेत् ।।१४

इति ते कथितं दिव्यं स्तोत्रं सारस्वत-प्रदं । अस्मात् पर-तरं नास्ति स्तोत्रं तन्त्रे महेश्वरि ।।१५

।। वृहन्नीलतन्त्रे सारस्वत-प्रदं श्रीतारा-स्तोत्रम् सम्पूर्णम् ।।

हिन्दी रूपान्तर

सारस्वत-प्रद श्रीतारा-स्तोत्र

श्रीभैरव ने कहा—हे महादेवि ! तारिणी का उत्तम स्तव कहा जाता है।

हे घोर-रूपवाली, महान् शब्द करनेवाली, शत्रुओं का नाश करनेवाली, भक्तों को वर देनेवाली देवि ! मुझ शरणागत की रक्षा करो (१)।

देवों और दानवों से पूजी जानेवाली, सिद्धों और गन्धर्वों से सेवा पानेवाली, जड़ता और पाप को दूर करनेवाली हे देवि ! मुझ शरणागत की रक्षा करो (२)।

जटा-जूट धारण करनेवाली, लपलपाती जीभ से भयानक लगनेवाली, शीघ्र बुद्धि देनेवाली देवि ! मुझ शरणागत की रक्षा करो (३)।

सुन्दर रूप, भयानक रूप और उग्र रूप धारण करनेवाली तुम्हें नमस्कार है। सृष्टि-रूपवाली तुम्हें नमस्कार है। मुझ शरणागत की रक्षा करो (४)।

मूर्खों की मूर्खता तुम नष्ट करती हो। भक्तों से स्नेह करनेवाली हे देवि ! मेरी मूर्खता को दूर करो, मुझ शरणागत की रक्षा करो (५)।

'हूं' से हूंकार-मय हे देवि ! बलि और होम तुम्हें प्रिय हैं, तुम्हें नमस्कार है। हे उग्रतारे ! तुम्हें नमस्कार है। मुझ शरणागत की रक्षा करो (६)।

मुझे बुद्धि दो, यश दो, कवित्व दो, मेरी कुबुद्धि को दूर करो। हे देवि ! मुझ शरणागत की रक्षा करो (७)।

इन्द्रादि देव-गण और ईश्वर से वन्दना की जानेवाली हे दया-मयि तारे ! तुम्हारा मुख चन्द्रमा के समान सुन्दर है। मुझ शरणागत की रक्षा करो (८)।

फल-श्रुति

अष्टमी, चतुर्दशी और नवमी के दिन जो मनुष्य इस स्तोत्र का पाठ करता है, वह छः महीने में सिद्धि प्राप्त कर लेता है, इसमें सन्देह नहीं। मुमुक्षु मोक्ष, धनार्थी धन, विद्यार्थी तर्क-व्याकरणादि का ज्ञान पा जाता है। जो सदा भक्ति के साथ इस स्तोत्र को पढ़ता है, उसके शत्रु नष्ट हो जाते हैं और वह महान् विद्वान् होता है। कष्ट या संघर्ष में, जप-दानादि अनुष्ठान में, भय में जो इस स्तोत्र को पढ़ता है, उसका कल्याण होता है, इसमें सन्देह नहीं। हे देवेशि ! इस स्तोत्र को पढ़कर भक्ति के साथ प्रणाम करे, योनि-मुद्रा दिखाकर वर मांगे। इस स्तोत्र से देवेशी की प्रार्थना कर भक्त सभी कामनाओं को प्राप्त करता है और वह सभी विद्याओं का ज्ञाता होता है। यह दिव्य स्तोत्र ज्ञान-प्रदायक है। इससे श्रेष्ठ अन्य कोई स्तोत्र तन्त्र में नहीं है।

[११]

श्रीतारिणी-शतनाम-रहस्य-स्तोत्रम्

श्रीपार्वत्युवाच—

श्रृणु देव! जगद्-बन्धो! मद्-वाक्यं दृढ़-निश्चितं । इदानीं श्रोतुमिच्छामि तारायाः वद साम्प्रतं ।।

श्रीशिव उवाच—

धन्यासि देव-देवेशि ! दुर्गे! दुर्गति-नाशिनि! यं श्रुत्वा मोक्षमाप्नोति पठित्वा नग-नन्दिनि ।।
तारिणी तरला तन्वी तारा तरुण-वल्लरी । तीव्र-रूपा तरी श्यामा तनु-क्षीण-पयोधरा ।।
तुरीया तरुणा तीव्र-गमना नील-वाहिनी । उग्र-तारा जया चण्डी श्रीमदेक-जटा शिवा ।।
तरुणी शाम्भवी छिन्न-भाला च भद्र-तारिणी । उग्रा उग्र-प्रभा नीला कृष्णा नील-सरस्वती ।।
द्वितीया शोभिनी नित्या नवीना नित्य-नूतना । चण्डिका विजयाराध्या देवी गगन-वाहिनी ।।
अट्टहास्या करालास्या चतुरास्यादिति-पूजिता । रौद्रा रौद्र-मयी मूर्त्तिर्विशोका शोक-नाशिनी ।।
शिव-पूज्या शिवाराध्या शिव-ध्येया सनातनी । ब्रह्म-विद्या जगद्धात्री निर्गुणा गुण-पूजिता ।।
सगुणा सगुणाराध्या हरीन्द्र-देव-पूजिता । रक्त-प्रिया च रक्ताक्षी रुधिरासव-भूषिता ।।
बलि-प्रिया बलि-रता दुर्गा बलवती बला । बल-प्रिया बल-रता बलराम-प्रपूजिता ।।
अर्द्ध-केशेश्वरी केशा केशवेश-विभूषिता । पद्म-माला च पद्माक्षी कामाख्या गिरि-नन्दिनी ।।
दक्षिणा चैव दक्षा च दक्षजा दक्षिणे रता । वज्र-पुष्प-प्रिया रक्त-प्रिया कुसुम-भूषिता ।।
माहेश्वरी महादेव-प्रिया पञ्च-विभूषिता । इडा च पिङ्गला चैव सुषुम्णा प्राण-रूपिणी ।।
गान्धारी पञ्चमी पञ्चाननादि-परिपूजिता । इत्येतत् कथितं देवि ! रहस्यं परमाद्भुतम् ।।

फल-श्रुति

य इदं पठति स्तोत्रं तारायास्तु रहस्यकम् । सर्व-सिद्धि-युतो भूत्वा विहरेत् क्षिति-मण्डले ।।
तस्यैव मन्त्र-सिद्धिः स्यान्मन्त्र-सिद्धिरनुत्तमा । भवत्येव महामाये ! सत्यं सत्यं न संशयः ।।
मन्दे मङ्गलवारे च यः पठेन्निशि संयतः । तस्यैव मन्त्र-सिद्धिः स्याद् गाणपत्यं लभते सः ।।
श्रद्धयाश्रद्धया वापि पठेत् तारा-रहस्यकम् । सोऽचिरेणैव कालेन जीवन्मुक्तः शिवो भवेत् ।।
सहस्रावर्त्तनाद् देवि ! पुरश्चर्या-फलं लभेत् । एवं सतत-युक्ता ये ध्यायन्तस्तामुपासते ।।
ते कृतार्था महेशानि! मृत्यु-संसार-बन्धनात् । रहस्यं तारिणी देव्याः शिव-ध्येयं शिव-प्रदम् ।।

।। श्रीमुण्डमाला-तन्त्रे तारिणी-शतनाम-स्तोत्रं समाप्तम् ।।

हिन्दी रूपान्तर

श्रीतारिणी-शतनाम-रहस्य-स्तोत्र

श्री पार्वती ने कहा—हे जगत् के वन्धु, महादेव ! अब मैं तारा का शतनाम सुनना चाहती हूँ। उसे बताइये।

श्री शिव ने कहा—हे देव-देवेशि दुर्गे ! जिसके सुनने और पढ़ने से मोक्ष मिलता है, उसे सुनो—

१ तारिणी, २ तरला, ३ तन्वी, ४ तारा, ५ तरुण-वल्लरी, ६ तीव्र-रूपा, ७ तरी, ८ श्यामा, ९ तनु-क्षीणा, १० तनु-पयोधरा, ११ तुरीया, १२ तरुणा, १३ तीव्रा, १४ तीव्र-गमना, १५ नील-वाहिनी, १६ उग्र-तारा, १७ जया, १८ चण्डी, १९ श्रीमदेक-जटा, २० शिवा, २१ तरुणी, २२ शाम्भवी, २३ छिन्न-भाला, २४ भद्र-तारिणी, २५ उग्रा, २६ उग्र-प्रभा, २७ नीला, २८ कृष्णा, २९ नील-सरस्वती ३० द्वितीया, ३१ शोभिनी, ३२ नित्या, ३३ नवीना, ३४ नित्य नूतना, ३५ चण्डिका, ३६ विजया, ३७ आराध्या, ३८ देवी, ३९ गगन-वाहिनी, ४० अट्टहास्या, ४१ करालस्या, ४२ चतुरास्य-पूजिता, ४३ अदिति-पूजिता, ४४ रौद्रा, ४५ रौद्र-मयी, ४६ मूर्ति, ४७ विशोका, ४८ शोक-नाशिनी, ४९ शिव-पूज्या, ५० शिवाराध्या, ५१ शिव-ध्येया, ५२ सनातनी, ५३ ब्रह्म-विद्या, ५४ जगद्धात्री, ५५ निर्गुणा, ५६ गुण-पूजिता, ५७ सगुणा, ५८ सगुणाराध्या, ५९ हरि-पूजिता, ६० इन्द्र-पूजिता, ६१ देव-पूजिता, ६२ रक्त-प्रिया, ६३ रक्ताक्षी, ६४ रुधिर-भूषिता, ६५ आसव-भूषिता, ६६ बलि-प्रिया, ६७ बलि-रता, ६८ दुर्गा, ६९ बलवती, ७० बला, ७१ बल-प्रिया, ७२ बल-रता, ७३ बलराम-प्रपूजिता, ७४ अर्द्ध-केशा, ७५ ईश्वरी, ७६ केशा, ७७ केशव-विभूषिता, ७८ ईश-विभूषिता, ७९ पद्म-माला, ८० पद्माक्षी, ८१ कामाख्या, ८२ गिरि-नन्दिनी, ८३ दक्षिणा, ८४ दक्षा, ८५ दक्षजा, ८६ दक्षिणे रता, ८७ वज्र-पुष्प-प्रिया, ८८ रक्त-प्रिया, ८९ कुसुम-भूषिता, ९० माहेश्वरी, ९१ महादेव-प्रिया, ९२ पञ्च-विभूषिता, ९३ इडा, ९४ पिङ्गला, ९५ सुषुम्णा, ९६ प्राण-रूपिणी, ९७ गान्धारी, ९८ पञ्चमी, ९९ पञ्चानन-प्रपूजिता, १०० आदि-प्रपूजिता।

हे देवि ! यह अति अद्भुत रहस्य कहा है। जो तारा के इस रहस्य-स्तोत्र को पढ़ता है, वह सब सिद्धियों से युक्त होकर पृथ्वी पर विहार करता है। उसे ही उत्तम मन्त्र-सिद्धि मिलती है, यह सत्य है, इसमें सन्देह नहीं। शनि (मन्द) वार और मङ्गलवार की रात्रि में जो संयम के साथ इसका पाठ करता है, उसे मन्त्र-सिद्धि मिलती है और वह जन-नेता बनता है। श्रद्धा से या बिना श्रद्धा से भी इस तारा-रहस्य को पढ़नेवाला शीघ्र ही जीवन्मुक्त होकर शिव-रूप होता है। एक सहस्र आवृत्ति से इसका पुरश्चरण होता है। ध्यान करते हुये जो निरन्तर इससे उपासना करते हैं, वे मृत्यु और संसार के बन्धन से छूटकर कृतार्थ हो जाते हैं। तारिणी देवी का यह रहस्य-स्तोत्र परम कल्याणकारी है।

श्रीतारोपनिषत्

ॐ तत्सद् ब्रह्म । तद्-रूपं प्रकृति-परं गगनाभं । तत्परं परमं महत्सत्यं, तदहं ह्लींकारं रक्त-वर्णं । नानाभः स्त्रींकारं । पिङ्गलाभं हूंकारं, विशदाभं मद्-हृदय-रूपं, भू-मण्डलं । फट्-कारं धूम्र-वर्णं मत्-खड्गम् । ओङ्कार-ज्वलद्-रूपं मन्मस्तकं । वेदाः मद्धस्ताश्चन्द्रार्काग्निला मन्नेत्रा । दिवानक्तं मत्पादौ । सन्ध्या मत्कर्णौ । संवत्सरो मदुदरो । मद्-दंष्ट्रा-पंक्तौ मत्पार्श्वौ वारर्त्तवो । मदंगुल्यो विद्याः । मन्नखाः पावको । मन्मुखं मही । मद्-रसना द्यौः । मन्मुखं गगनं । मद्-हृदयं भक्तिः । मम चर्म रसं । मद्-रुधिरं वान्नं । वासांसि फलानि । निरहङ्कारा अस्थीनि । सुधा मन्मज्जा । स्थावराणि मद्-रोमाणि । पातालादि-लोकौ मत्कुचौ । ब्रह्म-नादं मन्नाड्यं । ज्ञानं मन्मनः । क्षमा बुद्धिः । शून्यं मदासनं । नक्षत्राणि मद्-भूषणानि ।

एतद्-वैराटकं मद्-वपुः । मज्जलं सत्वं, बिन्दु-स्वरूपं, महाकार-स्वरूपं, ज्योतिर्मयं विद्धि शिरः । उग्र-तारां, महोग्रां, नीलां, घनामेक-जटां, महा-मायां, प्रकृतिं मां विदित्वा यो जपति, मद्-रूपाणि यो वेत्ति, मन्मन्त्रं यो जपति, मद्-रूप-कल्पितां यो जपति, भगं भजति निर्विकल्पः, स साधकः सदा मद्-रूपो भवति । सर्वाणि कर्माणि साध्यानि निर्भयो भवति । गुरुं नत्वा, स्तुत्वा वस्त्र-भूषणानि दत्वा इमामुपनिषद्-विद्यां प्राप्य मां यो जपति स जीवन्मुक्तो भवति ॥

ॐ वह ब्रह्म सत्य है । उसका रूप प्रकृति से परे है । वह आकाश की आभावाला है । उससे परे परम महान् सत्य है, वह मैं 'ह्लीं' कार रक्त-वर्ण हूं । 'स्त्रीं' कार अनेक वर्ण का है । पीले वर्ण का 'हूं' कार विशद—विस्तृत आभावाला, मेरा हृदय-स्वरूप, भू-मण्डल है । धूम्र-वर्ण 'फट्' कार मेरा खड्ग है । जाज्वल्यमान ॐकार मेरा मस्तक है । वेद मेरे हाथ हैं । चन्द्र, सूर्य, अग्नि—ये मेरे नेत्र हैं । दिन-रात मेरे पैर हैं । सन्ध्यायें मेरे कान हैं । सम्वत्सर मेरा पेट है । सात दिन और ऋतुयें मेरे दाँतों की पंक्तियाँ और मेरे पार्श्व हैं । समस्त विद्यायें मेरी अँगुलियाँ हैं । अग्नि मेरे नख हैं । मेरा मुख भूमि है । द्यु-लोक मेरी जिह्वा है । आकाश मेरा मुख है । भक्ति मेरा हृदय है । रस मेरा चर्म है । अन्न मेरा रक्त है । फल मेरे कपड़े हैं । निरहङ्कारता मेरी हड्डियाँ हैं । सुधा मेरी मज्जा है । स्थावर मेरे रोम हैं । पातालादि मेरे स्तन हैं । ब्रह्म-नाद मेरी नाड़ियाँ हैं । ज्ञान मेरा मन है । क्षमा मेरी बुद्धि है । शून्य मेरा आसन है । नक्षत्र मेरे आभूषण हैं ।

यह मेरा विराट् शरीर है । सत्व-स्वरूप, विन्दु-स्वरूप, महाकार-स्वरूप, ज्योतिर्मय जल मेरा शिर है । उग्रतारा, महोग्रा, नीला, घना, एक-जटा, महा-माया, प्रकृति मुझको जानकर जो मेरा मन्त्र जपता है; मेरे रूपों को जानता है; मेरे मन्त्र को जो जपता है; मेरे कल्पित रूपों को जो जपता है; जो भग को भजता है—वह निर्विकल्प साधक सदा मेरा रूप बन जाता है । उसे समस्त कार्य साध्य हो जाते हैं और वह निर्भय हो जाता है ।

गुरुदेव को नमस्कार कर, स्तुति कर, वस्त्राभूषणादि प्रदान कर इस उपनिषद्-विद्या को प्राप्त कर जो साधक मेरे मन्त्र को जपता है, वह जीवन्मुक्त हो जाता है ।

[१३]

श्रीनील-तारा अष्टोत्तर-शतनाम स्तोत्रम्

एकदाङ्क-स्थिताया वै निशम्य वचनं श्रियः । उवाच कृश-मध्याङ्गीं पीनोन्नत-पयोधरां ॥
जघनाभार - भरिताम् सर्वाभरण - भूषितां । समुद्यदिन्दु - वदनां विलसन्नेत्र - पङ्कजः ॥
विष्णुस्त्रिलोकाधिपतिः सुगतस्त्वं वदस्व मे । प्रीत्या सत्यं दयागार ! यद्यहं तव वल्लभा ॥

श्रीविष्णुरुवाच—

साध्वि ! त्वं सुकुमाराङ्गि उन्नत-स्तन-मण्डले ! साधु-वादं भवत्-पात्र-कथितं मां प्रति प्रिये !
शृणुष्वेदं भद्र-मूर्ते चञ्चले चटुलेक्षणे । नामेदं नील-तारिण्या अष्टोत्तर-शतं परम् ॥
इदमेव पुरा वज्री पृष्टवाँश्चन्द्र-शेखरम् । उपदिष्टं तेन तस्मै तेन जातस्त्रिलोक-राट् ॥
शृणुष्व सावधानेन चेतसा चञ्चले ध्रुवम् । अपरीक्षित-शिष्याय न देयं सत्यमेव हि ॥
कुलीनाय प्रदातव्यं सुधिये शान्त-चेतसे । अभक्तेभ्योऽपि पुत्रेभ्यो न देयं यस्य कस्यचित् ॥
मन्त्रोद्धारमिदं भद्रे ! आदावुच्चार्य साधकः । तदेतन्नील-तारायाः स्तव-राजं पठेत् सुधीः ॥
मन्त्रोद्धारं प्रवक्ष्यामि सावधानेन तच्छृणु । उद्धारो मन्त्र-राजस्य सर्व-पाप-प्रणाशकः ॥
जीमूत - वर्त्म - दहन - स्थितमिन्दु-युक्तमुद्यद् । दिनेश्वर-निभं तव देवि ! बीजं परात्परम् ॥
आद्यं जनो यदि जपेज्जगतां भवानि ! लोक-त्रयं स वशयेत् स्व-सरस्वतीभिः ॥
शुक्रं हरि - स्थलमनलेन्दु - शान्ति - युक्तं । स्त्रीं बीजमम्ब ! तव जनो जपेत् कदाचित् ॥
मुक्तावली-लसदुरोज-भराः सुनेत्रा । रम्भादयोपि वशगाः प्रभवन्ति तस्य ॥
खं वाम-कर्ण-कलितं शशि-शेखराढ्यम् । कूर्चाभिधं जननि ! बीजमिदं जपेद् यः ॥
पञ्चाशदुग्र-नर-मुण्ड - विशाल-माले । संहतमस्य चरणः क्षमते त्रिलोकीम् ॥
वर्ण-त्रयात्मको मन्त्रस्त्रिलोकी-मोहन-क्षमः । स चायं नील-तारिण्या मूल-मन्त्र उदाहृतः ॥
प्रणवाद्या महा-विद्या फडन्ता चोग्र-तारिणी । आदि-बीजं विना देवि ! प्रोदितैक-जटा पुनः ॥
ऋषि-न्यासं कर-न्यासमङ्ग-न्यासं विधाय च । ध्यायेत् तारां महादेवीं मानसे हंस-गामिनीम् ॥

ध्यान—

प्रत्यालीढ-पदां घोरां मुण्ड-माला-विभूषितां । खर्वां लम्बोदरीं भीमां व्याघ्र-चर्मावृतां कटौ ॥
नव-यौवन-सम्पन्नां पञ्च-मुण्ड-विभूषितां । चतुर्भुजां ललज्जिह्वां महा-भीमां वर-प्रदां ॥
खड्ग-कर्त्री-धरां सव्ये वामे मुण्डोत्पलान्वितां । बालार्क-मण्डलाकार-लोचन-त्रय-भूषितां ॥
पिङ्गोग्रैक-जटां ध्याये मौलावक्षोभ्य-भूषितां । नील-नाग-जटा-जूटां श्वेताहि-कृत-कुण्डलां ॥
पीताहि-कंकणोपेतां धूम्राहि-बाहु-भूषणां । श्याम-नागोपवीतां च शुभ्राहि-हार-भूषणां ॥
श्वेत-नाग-लसत्-काञ्चीं पाटलाहि-पद-द्वयां । पार्श्व-द्वये लम्बमान-नीलेन्दीवर-मालिकां ॥
प्रज्वलत्-प्रेत-भू-मध्य-स्थितां दंष्ट्रा करालिनीं । शव-कंठ-पद-द्वन्द्व-वाम-दक्ष-पद-द्वयाम् ॥
सावेश-स्मेर-वदनां भक्तानामभय-प्रदां ॥

प्रलय-जलधि-मध्ये स्फीत-फुल्लाम्बुजस्थां । जलद-पटल-नीलां लोल-जिह्वां त्रि-नेत्रां ॥
शिव-शव-हृदि - वासामासवाच्चूर्णिताक्षीं । उडु - गण - कृत - हारामाश्रये नील-ताराम् ॥

एवं ध्यायन्महा-विद्यां पिवन्नपि च कारणम् । अदन्नपि च मांसं च स्तव-राजं पठेत् सुधीः ॥
अस्य स्तोत्रस्याब्धि-सुते ऋषिरास्ते स्वयं हरिः । छन्दोऽनुष्टुप् तथा प्रोक्तं देवता भव-तारिणी ॥

अष्टोत्तर-शतनाम—

स्त्रीं तारा तारिणी तीक्ष्णा तीक्ष्ण-दंष्ट्रा तिल-प्रभा, कराल-वदना काली कुल-मार्ग-प्रवर्द्धिनी ॥
कात्यायनी च कौमारी राज-राजेश्वरी रमा । श्रीविद्या शाम्भवी शक्तिर्भैरवी भव-हारिणी ॥

महा-काली महा-लक्ष्मीर्महा-वाणी महोदरी । इन्द्राक्षी छिन्न-मस्ता च श्यामलांगी कृशोदरी ॥
पुनीता पार्वती पुण्या प्रलयांगार-लोचना । काल-रात्रिर्महा-काल-कामिनी च क्रिया कला ॥
दलितेन्दीवराक्षी च दानवेन्द्र-विमर्दिनी । लोक-कर्त्री कर्त्रि-हस्ता कपालोत्पल-धारिणी ॥
मुण्ड-हस्ता मुण्ड-माला भुजङ्ग-कृत-कुण्डला । अर्धेन्दु-मौलिरमला परमा परमेश्वरी ॥
पूर्णेन्दु-विम्ब-वदना वाराहीन्दु-कला वरा । चामुण्डा चण्ड-वीर्या च चण्ड-दोर्दण्ड-खंडिनी ॥
प्रेत-मंडल-मध्यस्था भैरव-व्रज-सेविता । गणेश-गुह-माता च गौरी गुर्वी गण-प्रिया ॥
दिनेश-मंडल-गता चन्द्र-मंडल-मध्यगा । नक्षत्रा क्षत्र-हस्ता च वह्निर्वायुर्जलं मरुत् ॥
ब्रह्माणी वैष्णवी शैवी शिवा शान्ता सनातनी । भवानी भीम-रूपा च भीमा च भव-तारिणी ॥
अंबिका चंडिका चंडी दुर्गा दुर्गाति-नाशिनी । विश्व-वाग्रूपिणी नीला कालिंदी जाह्नवी मही ॥
आकाश-वासिनी गंगा भुजङ्ग-वर-मालिनी । बाला धूमावती धन्या बगला भुवनेश्वरी ॥
षोडशी षोडश-कला खड्ग-खर्पर-धारिणी । उद्यदिन्दु-प्रतीकाशा कोटि-सूर्य-सम-प्रभा ॥
ठक्कुराज्ञी महा-राज्ञी पट्ट-राज्ञी प्रभाविनी । कर्पादिनी कोटि-मूर्तिर्महा-माया महोत्सवा ॥

फल-श्रुति

इति ते कथितं लोल-कुण्डलोन्मण्डितानने । अष्टोत्तर-शतं नाम तारायास्तूर्णं-सिद्धिदम् ॥
स्तव-राजं पठेदेतदनाकुल-मना नरः । षण्मासान्तस्त्रि-सन्ध्यायां राजानं वशमानयेत् ॥
षोढा-विन्यस्त-देहाय क्रम-दीक्षान्विताय च । महा-चीन-क्रमज्ञाय देयमेतच्च नान्यथा ॥
एकैक - नामजं पुण्यमसंख्य - फलदं महत् । निशीथे त्रिरिदं जप्त्वा महा-महेश्वरो भवेत् ॥
विधानमथ वक्ष्यामि विधेयं भक्त-सत्तमैः । ताम्बूल-पूरित-मुखः सुदृढः साधकाग्रणीः ॥
उपचारैरनेकैश्च पूजयेत् परमेश्वरीम् । सिन्दूर-वेदिका-मध्ये पादावुल्लिख्य यत्नतः ॥
महा-देवीं यजेत् तत्र जगदीश-नमस्कृताम् । सिन्दूर-करवीराद्यैः कुसुमैर्लोहितैः सितैः ॥
जवा-जन्यैर्बिल्व-दलैर्विष्णुक्रान्ता-तरूद्भवैः । जल-स्थल-सरोजैश्च पारिजात-प्रसूनकैः ॥

कुन्दैश्च कर्णिकारैश्च प्रसन्न-वदनः प्रिये ! नैवेद्यैरासवाद्यैश्च पंचभिर्मैश्च पूपकैः ॥
अन्यैश्च विविधैर्द्रव्यैर्धृतावक्तैर्विश्व-मातरम् । पूजयेत् साधक-श्रेष्ठो भक्त्या निश्चल-मानसः ॥

करवीर-रक्त-पुष्पैः स - तिलैः स - यवाक्षतैः । मधु-सिक्तैः शर्कराद्यैः पायसान्नेन संयुतैः ॥
प्रति-नाम निशीथे हि वृतावक्तैर्हवनं चरेत् । नमस्कृत्य महा-देवीं बलिं दद्यादतन्द्रितः ॥

मांस-माषान्न-शाकाज्य-पायसापूपकादिकैः । चतुष्पथे मुक्त-केशः आसवाच्चूर्णितेक्षणः ॥
उक्तमेतद् विधत्ते यः स साक्षाच्छङ्करो भवेत् । गद्य-पद्य-मयी वाणी तस्य गङ्गा-प्रवाह-वत् ॥

वक्त्र-शुभ्रांशु-बिम्बे वै प्रलापादपि जायते । नेत्रारविन्द-युगले कमला निश्चला भवेत् ॥
चक्रवर्ति-शिरोरत्न-निर्धृष्ट-चरणो जनः । भवेत् तमनुगच्छन्त्यः सेवन्ते उर्वशी-मुखाः ॥

स्तम्भनं जम्भनं चेन्दोर्मोहनं जगतामपि । शोषणं सागराणां च कर्तुं स क्षमते पुमान् ॥
महात्मा स चिरंजीवन्मुक्तस्त्यक्त-विकल्पनः । कीर्त्या शीत-द्युतिः स स्याच्चंड-रश्मिः प्रतापतः ॥

तत्-सौन्दर्येण वृत्तोरु-लज्जाकृन्मीन-केतनः । रिपूणां काल-रूपः स्यात् सर्व-शक्त्या स्वयं शिवः ॥
गुरुः शास्त्रार्थ-वेतॄणां ज्ञाता भूत-भविष्ययोः । निर्भयो विचरेल्लोके विहारी भैरवो यथा ॥

भूर्ज-पत्रे लिखित्वेदं रसेन जतु-जन्मना । रक्त-वर्णेन नव्येन वेष्टयेत् पट्ट-वाससा ॥
सुवर्ण-गुटिकास्थं च दोषि-दक्षे निधारयेत् । पुमांस्त्री वाम-बाहौ तच्चित्तेप्सित-फल-प्रदम् ॥

यः पठेत् प्रयतः प्रातः प्रिये ! आवर्षमुत्सुकः । स लक्ष्मी-राजित-गृहः सर्व-विद्या-विशारदः ॥
य इदं द्वादशावृत्या जपेज्जघन-मध्यगः । नित्यं निधु-वनासक्तः स वाचा-पटुतां व्रजेत् ॥

ईशामीश-गणेश-वन्दित-पदां संसार-विद्या-मयीं । पैष्टी-पान-परायणां यदखिल-ब्रह्माण्ड-वाग्-रूपिणीं ॥
उद्यद्दीप्त-कलां परापर-कलां संसार-सारां परां । तारां नील-सरोज-राजित-करां तामीश्वरीमाश्रये ॥

॥ श्रीविष्णु-यामले ताराष्टोत्तर-शतनाम-स्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

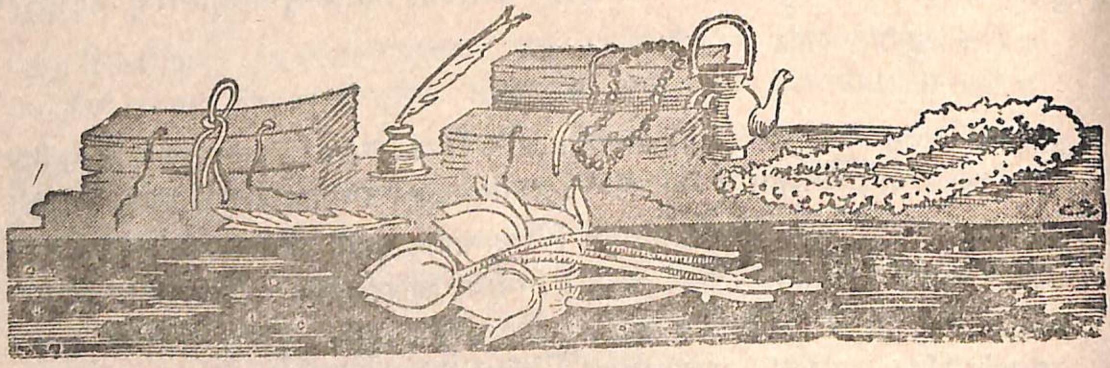

हिन्दी रूपान्तर

श्रीनील-तारा अष्टोत्तर-शतनाम स्तोत्र

प्रस्तुत स्तोत्र के प्रारम्भ में 'पूर्व-पोठिका' है। इसके अन्तर्गत भगवान् विष्णु द्वारा यह बताया गया है कि भगवती नीलतारा के इन १०८ नामों का उपदेश भगवान् शङ्कर ने इन्द्र को किया था। इस प्रसङ्ग में यह भी उल्लिखित है कि श्रीतारा का मूल-मन्त्र 'ह्रीं स्त्रीं हूं' है। इसके आदि में प्रणव और अन्त में 'फट्' लगाने से श्रीउग्रतारा का पाँच अक्षर का मन्त्र बनता है—'ॐ ह्रीं स्त्रीं हूं फट्'। इस पञ्चाक्षर मन्त्र के आदि-बीज अर्थात् प्रणव को हटाने से श्रीएकजटा का मन्त्र प्राप्त होता है, जो चार अक्षर का है—'ह्रीं स्त्रीं हूं फट्'। ऋष्यादि-न्यास, कर-न्यास, अङ्ग-न्यास करके ध्यान करे, जो पृष्ठ ४२ पर दिया है।

ध्यान कर कारण और शुद्धि का प्रसाद ग्रहण करते हुये इस स्तोत्र का पाठ करने की विधि है। स्तोत्र का विनियोग है—

अस्य श्रीनीलतारा-अष्टोत्तर-शतनाम-स्तोत्रस्य श्रीहरिः ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। भव-तारिणी श्रीनील-तारा देवता। श्रीनील-तारा-प्रीत्यर्थे पाठे विनियोगः।

विनियोग के अनुसार ऋष्यादि-न्यास कर १०८ नामों का पारायण करे—

१ तारा, २ तारिणी, ३ तीक्ष्णा, ४ तीक्ष्ण-दंष्ट्रा, ५ तिल-प्रभा, ६ कराल-वदना, ७ काली, ८ कुल-मार्ग-प्रवर्द्धिनी, ९ कात्यायनी, १० कौमारी, ११ राज-राजेश्वरी, १२ रमा, १३ श्रीविद्या, १४ शाम्भवी, १५ शक्ति, १६ भैरवी, १७ भव-हारिणी, १८ महा-काली, १९ महा-लक्ष्मी, २० महा-वाणी, २१ महोदरी, २२ इन्द्राक्षी, २३ छिन्नमस्ता, २४ श्यामलाङ्गी, २५ कृशोदरी, २६ पुनीता, २७ पार्वती, २८ पुण्या, २९ प्रलयाङ्गार-लोचना, ३० काल-रात्रि, ३१ महा-काल-कामिनी, ३२ क्रिया, ३३ कला, ३४ दलिता, ३५ इन्दीवराक्षी, ३६ दानवेन्द्र-विमर्दिनी, ३७ लोक-कर्त्री, ३८ कर्त्रि-हस्ता, ३९ कपालोत्पल-धारिणी ४० मुण्ड-हस्ता, ४१ मुण्ड-माला, ४२ भुजङ्ग-कृत-कुण्डला, ४३ अर्धेन्दु-मौलि, ४४ अमला, ४५ परमा, ४६ परमेश्वरी, ४७ पूर्णेन्दु-विम्ब-वदना, ४८ वाराही, ४९ इन्दु-कला, ५० वरा, ५१ चामुण्डा, ५२ चण्ड-वीर्या, ५३ चण्ड-दोर्दण्ड-खण्डिनी, ५४ प्रेत-मण्डल-मध्यस्था, ५५ भैरव-व्रज-सेविता, ५६ गणेश-माता ५७ गुह-माता, ५८ गौरी, ५९ गुर्वी, ६० गण-प्रिया, ६१ दिनेश-मण्डल-गता, ६२ चन्द्र-मण्डल-मध्यगा, ६३ नक्षत्रा, ६४ क्षत्र-हस्ता, ६५ वह्नि, ६६ वायु, ६७ जल, ६८ मरुत्, ६९ ब्रह्माणी, ७० वैष्णवी, ७१ शैवी, ७२ शिवा, ७३ शान्ता, ७४ सनातनी, ७५ भवानी, ७६ भीम-रूपा, ७७ भीमा, ७८ भव-तारिणी, ७९ अम्बिका, ८० चण्डिका, ८१ चण्डी, ८२ दुर्गा, ८३ दुर्गार्ति-नाशिनी, ८४ विश्व-वाग्-रूपिणी, ८५ नीला, ८६ कालिन्दी, ८७ जाह्नवी, ८८ मही, ८९ आकाश-वाहिनी, ९० गङ्गा, ९१ भुजङ्ग-वर-मालिनी, ९२ बाला, ९३ धूमावती, ९४ धन्या, ९५ बगला, ९६ भुवनेश्वरी, ९७ षोडशी, ९८ षोडश-कला, ९९ खड्ग-खर्पर-धारिणी, १०० उद्यदिन्दु-प्रतीकाशा, १०१ कोटि-सूर्य-सम-प्रभा, १०२ ठक्कुराज्ञी, १०३ महाराज्ञी, १०४ प्रभाविनी, १०५ कर्पादिनी, १०६ कोटि-मूर्ति, १०७ महामाया, १०८ महोत्सवा।

इन १०८ नामों का, छः महीने तक तीनों सन्ध्या-कालों में शान्त चित्त से, पाठ करने से राजा वशीभूत होते हैं। एक-एक नाम के पाठ से होनेवाले पुण्य का फल अनन्त है।

[१४]

श्रीमहोग्रतारा क्रोधोपशमनं सहस्रनाम स्तोत्रं

हिंगुलाख्ये महा-पीठे सर्व-पीठोत्तमोत्तमे । तत्र स्थितं महा-रुद्रं सर्व-तेजोमयं विभुम् ।।
सदा मौन-धरं शान्तं सदा स्तोत्र-परायणम् । दृष्ट्वोवाच महा-माया पार्वती वत्सलान्तरा ।।

श्रीदेव्युवाच—किं त्वया जप्यते नाथ ! स्मर्यते सर्वदा च किम् ।
केन प्रकारितो देव ! क्रोधोपशमनं तव । तन्मे कथय देवेश ! यद्यहं तव वल्लभा ।।

श्रीशिवोवाच—
रहस्याति-रहस्यं च रहस्याति-रहस्यकम् । विना मन्त्रं विना यन्त्रं कवचं च विना प्रिये ।।
विना स्तोत्रं विना जाप्यं तारा येन प्रसीदति । अहर्निशं मया तारा स्मर्यते जप्यतेऽर्च्यते ।
तस्याः प्रसादतो देवि ! क्रोधोपशमनं मम । मम तारा प्रसन्नास्ति तेनाऽहं सुख-रूपवान् ।।
वीरभद्रावतारे तु क्रोध-रूपोऽहमव्ययः । मत्क्रोधेन महेशानि ! भस्मीभूतं जगत्-त्रयम् ।।
तदा काली मया जप्ता वीर-साधन-योगतः । मम प्रोक्तं तदा काल्या तारा-नाम-सहस्रकम् ।।
ततः प्रभृति मत्क्रोध-शमनं जातमत्र तु । मत्स्यैर्मांसैः सुराद्यैश्च मेदो-मज्जाभिरेव तु ।।
सन्तर्प्य पूजयेद् भक्त्या तदा तारा प्रसीदति । ब्रह्माण्ड-कोटिर्यस्यान्ते वर्तते तु भविष्यति ।।
पारे परार्ध-कोटीनां ब्रह्माण्डं योनि-मण्डले । यत्प्रकाशात् समस्तं च जगदेतत् प्रचक्षते ।
तस्या नाम-साहस्रं तु कथ्यते गोपनं कुरु ।।

विनियोगः—ॐ अस्य श्रीमहोग्र-तारायाः दिव्याति-गुप्त क्रोधोपशमनाख्य-सहस्र-नाम-स्तोत्र-मन्त्रस्य श्रीमदक्षोभ्य-ऋषिः, बृहतीच्छन्दः, श्रीमदुग्र-तारा-रूपा मम प्राण-शक्ति-श्चिद्रूपिणी कुण्डलिनी देवता, हूं बीजं, फट् शक्तिः, स्त्रीं कीलकं, मम परम-शिवत्व-प्राप्ति-कामनया-चतुर्वर्ग-सिद्ध्यादि-द्रुत-कवित्वाद्यर्थे श्रीमदुग्र-तारैक-जटा-नील-सरस्वती - मन्त्र-सिद्ध्यर्थे सहस्रनाम-स्तोत्र-मन्त्रस्य पाठे विनियोगः ।।

पाठ-विधिः—ॐ हंसः सोऽहमित्यात्मानं शिव-स्वरूपं ध्यात्वा श्रीगुरुं प्रणम्याज्ञां लब्ध्वा श्रीमूर्ति संस्मृत्य स्वात्मनि स्वेष्ट-देवतां विभाव्य मूल-मन्त्रस्य ऋष्यादि-षडङ्ग-न्यासान् कृत्वा प्राणायामं भूत-शुद्धिं प्राण-प्रतिष्ठां च कृत्वा मूलेनाचम्य भस्म-सिन्दूरादिना तिलकं च कृत्वा वीर-वेशस्ताम्बूलादि-चर्चित-मुखो भूत्वा शिरसि श्रीगुरुमक्षोभ्यं, शरीरे शिवं, हृदये साङ्गोपाङ्गां श्रीमहोग्र-तारां एक-जटां नील-सरस्वतीं वा यथोक्त-रूपां ध्यात्वा तन्मयः सहस्रनाम-स्तोत्रं पठेत् ।।

॥ ॐ शिवाय नमः शिवोऽहं भैरवोऽहं सोऽहं ॐ हंसः ॥

श्री अक्षोभ्य उवाच—

ॐश्रीं तारा तुला तोतला च त्रैलोक्यविजया ततिः। तारिणी तरुणसेव्या तपस्या च तपोमयी ॥
तपोगम्या तापसी च तीर्था तीर्थ-परायणा। ओङ्कार-बीज-निलया तृतीया त्रिगुणात्मिका ॥
तनु-रूपा तनुस्था च तरुणी तरुणी-मयी। तरुणी-रूप-सम्प्रीता तार्त्तीय-बीज-रूपिणी ॥
थै थै थ था थोगडा च थकारा स्थूल-रूपिणी। दानवी दारुणा दीर्घा दीन-नाथा दयावती ॥
दीन-बन्धुर्दीन-गतिर्दक्षिणा दक्षिणानना। दारिद्रय-नाम-दम्भोक्ति द्रुत-सिद्धि-करी दया ॥
दीनार-दायिनी दुर्गा दुर्गासुर-विनाशिनी। धर्म-माता धर्म-रता धन-नाथा धनेश्वरी ॥
धनदा धीर-वचना धनुर्विद्या धनुर्धरी। धारणा धारणापारा धरित्री-नाथ-सेविता ॥
धाराधर-मयी धन्या धारा-स्तम्भन-कारिणी। नाग-रूपा नाग-कन्या नाग-हारा नगेश्वरी ॥
नगात्मजा नदी नारी नारी-पुष्प-परायणा। नाना-रूप-धरा नाट्या नाट्य-विद्या-विशारदा ॥
नाद-गम्या नाद-मयी नाद-प्रीति-परायणा। नवीना नूतनाम्भोज-परा पारायण-प्रिया ॥
पद्म-नेत्रा पद्म-गन्धा परमाह्लाद-चन्द्रिका। पति-प्रीता पति-गतिः पति-व्रत-परायणा ॥
पर-विद्याकर्षिणी च पर-राज्य-भयङ्करी। परा पुन्नागिनी प्रीता पीताभरण-भूषिता ॥
पीनोन्नत-कुच-द्वन्द्वा पीन-वक्षोनितम्बिनी। प्रीं-बीज-निलया फ्रें च फ्रेत्कार-कारिणी फणिः ॥
फाल्गुनानन्द-निलया फाल्गुनोत्सव-भूषिता। फाल्गुन-प्रीति-प्राणा च फट्कारा फ्रें-स्वरूपिणी ॥
ब्रीं-बीजा बगला बाला बार्हस्पत्य-गुणाकरा। बुधेज्या बुद्धि-दात्री च बटुकेशी बटु-प्रिया ॥
बटुका बटुकाराध्या बलि-रूपा बलि-प्रिया। बलिदान-रता ब्लूं च ब्लों-बीजाक्षर-रूपिणी ॥
बीज-गर्भा बीज-रूपा बीज-सन्तान-कारिणी। बाणासुर-निहन्त्री च बुबूकार-परायणा ॥
बृहस्पति-मुखस्था च भद्रा भानुमती भवा। भवानी भुवनाराध्या भुवनेशी च भू-प्रिया ॥
भूति-दात्री भूति-करी भूत-पूज्या भवान्तरा। भर्तृ-दारा भारगता भारती भरताग्रजा ॥
भीमा भयानका भामा भ्रोङ्कारी भ्रीं-स्वरूपिणी। भटानन्द-परा भक्ष्या भक्षणा भावना भृतिः ॥
भवानन्द-करा भीतिर्भू-कुण्डा भूपति-प्रिया। भवानीशा भाद्रपदा भव-हन्त्री भवार्तिहा ॥
भक्त-प्राणा भक्त-मयी भक्त-सन्तोष-मानसा। भग-पूजा भगावासा भग-माला भगेश्वरी ॥
भग-स्थात्री भग-प्रीता भग-पूजा-परायणा। भागीरथी भीम-सेना भामिनी भूधरात्मजा ॥
मान्या मानवती स्त्रीं च मामाकार-स्वरूपिणी। मित्र-माता मित्र-गतिर्माधवी मधु-माधवी ॥
मालती मदना मद्या मद्य-पूजा-परायणा। मदनान्तक-भार्या च माननीया महोत्सुका ॥
मधु-पुष्पा मीन-गर्भा मांस-चर्वण-तत्परा। मांसाहारा मानिनी च यक्षिणी यज्ञ-सुन्दरी ॥
यात्रा यादोनिधेः पुत्री यदु-वंश-समुद्भवा। याम्या च यमुना युक्तिर्युक्ति-गम्या यमात्मजा ॥

रात्रि-माला रात्रि-मयी रति-पुष्पा रजोत्तमा । रति-कुण्डा रतिकरी रैं-रैं-बीजाक्षरात्मिका ॥
रेणुका रेणुकाराध्या रत्ना रत्नेश्वरी रसा । राजीव-वन-मध्यस्था राजीव-वन-वासिनी ॥
रतान्तदा राकिनी च रँ-रँ-शब्द-परायणा । रात्रि-चर-प्रिया रुष्टा रौद्री स्त्री प्रकृतिः पुमान् ॥
रुद्र-ताण्डव-सन्तुष्टा रोदनः-तुष्ट-मानसा । राधा रति रसा राज्ञी रमणासुर-कन्यका ॥
लक्ष्मीर्लया लता लीला लोला लोल-लयात्मिका । लाक्ष्या लक्षरता लक्ष्या लांलींलूंलैं-स्वरूपिणी ॥
लूंलैंलोंलः-स्वरूपा च लाकिनी लक्ष्मणार्चिता । लक्ष्मण-प्राणदा ल्रीं च लोलावती च लाङ्गली ॥
लांगूल-निरता लूता लूंलूँलू लूं स्वरूप-धृक् । लोलाक्षी लोल-जिह्वा च लोमशा लोमशार्चिता ॥
लावण्यामृत-सारा च लावण्यामृतदीर्घिका । लिङ्गस्था लिङ्गिनी लिङ्ग-सुन्दरी लिङ्गरूपिणी ॥
लिङ्ग-माला लिङ्ग-भूषा लिङ्ग-पुष्पा च लिङ्गसूः । लज्जा लज्जावती लता लतालिङ्गन-तत्परा ॥
लता-पुष्प-प्रिया लम्बस्तनी लँ-बगला तथा । लम्ब-केशी लम्बिका च लम्बिकायोगधारिणी ॥
लम्बोदरी लम्ब-नेत्रा लम्ब-स्तन-धरा लसत् । वशिष्ठा विमला वाणी वाराही वीर-कन्यका ॥
वीर-माता वरेण्या च वार्त्ताली वीर-रूपिणी । वाम-मार्ग-रता वामा वामाचार-परायणा ॥
वाराणसी वराङ्गा च वराङ्ग-पुष्प-रूपिणी । वरिष्ठा वेद-वेद्या च वीणा वीणावती वरा ॥
वर्म-बीजा च वांवींवूं वेंवैंवः व्रीं-स्वरूपिणी । विमला विश्व-माता च विश्वेज्या विश्व-रूपिणी ॥
विद्या विद्यावती वेद्या वैद्य-माता विनोदिनी । वर-दात्री वाद्य-रता वाद्य-विद्या-विशारदा ॥
वागीश्वरी वासवी च वारुणी वरुणार्चिता । वारुणी-पान-निरता वारुणी-पान-घूर्णिता ॥
विश्वेश्वरी विश्व-मारी वर्विष्टा वर्ष-रूपिणी । व्रां-बीज-निलया वाणी वडवा वडवानला ॥
विश्व-दीप्तिर्विश्व-रुचिः शब्द-ब्रह्म-परायणा । शकार-वर्ण-रूपा च शङ्का शम्पाशवाश-कृत् ॥
शरच्चन्द्र-निभाकारा श्रीङ्कारा श्रीं-स्वरूपिणी । श्रांश्रींश्रूंश्रैंश्रौं स्वरूपा श्रंश्रः स्वच्छन्द-रूपिणी ॥
शब्द-ब्रह्म-मयी शक्तिः शक्ति-माता शकेश्वरी । श्मशान-वासिनी श्यामा शबरी शाङ्करी शची ॥
शक-कर्त्री शकानन्दा शरीर-रक्षिणी शमी । शमी-पूजा-रता शान्ता शान्ति-स्तोत्र-परायणा ॥
शान्ति-दुर्गा शान्ति-सारा शान्ति-काली-स्वरूपिणी । शत्रु-पक्ष-क्षयकरी शत्रु-देश-विनाशिनी ॥
षट्-कर्म-निरता षोढ़ा षण्मुखस्थ-वर-प्रदा । षण्मुखेज्या च षड्-वक्त्रा षड्-वर्ग-जय-दायिनी ॥
षकार-वर्ण-निलया षोढ़ा-न्यास-परायणा । षोढ़ा-मन्त्रा षोडशी च षोडशेशी च षड्-गतिः ॥
षडध्व-मार्ग-निलया षडाम्नाय-स्वरूपिणी । षष्ठी षण्मुख-माता च षष्ठी-पूजन-तत्परा ॥
षट्-कूटा च षडङ्गा च षडशीति-प्रभेदिनी । षड्-पञ्च-कोटि-चामुण्डा-रूपिणी सर्व-सिद्धिदा ॥
सर्वेश्वरी सर्व-माता सर्व-विद्या-स्वरूपिणी । सर्व-विद्यात्मिका सारा समयाचार-पालिनी ॥
समयस्था सर्व-रूपा सर्व-भूषा सरत्समा । सरयूः सर्व-मन्त्राढ्या सांसींसूंसैं-स्वरूपिणी ॥
सोंसौंसंसः स्वरूपाढ्या सौं-बीजा सौर-सुन्दरी । सुन्दरी सुन्दरानन्दा सुनन्दा सुमना सुखी ॥

सुरेज्या सुर-मान्या च सुरेखा सुर-सुन्दरी । सुर-पूज्या सुराधीशा समयानन्द-काल-वित् ।।
समयाचार-सन्तुष्टा समयाचारा-पुष्पिणी । सुरेश्वरी सर्व-सिद्धिः सर्व-ऋद्धि-मयी सुखा ।।
सुभगा सुभगाराध्या सुभगानन्द-रूपिणी । सूर्य-माता सुर-श्रेष्ठा सौः-बीजा स्फूं-स्वरूपिणी ।।
सः स्वस्त्या च स्त्रीं बीजाढ्या स्वधाकारस्वरूपिणी । स्वाहाकारा स्वधा संध्या सर्ववर्णविभाविनी
सर्व-शक्त्याश्रया योनिः सर्व-जीवाश्रया सुहृत् । सर्व-योनिः सर्वलिङ्गा स्वस्ति-रूपा स-वर्णभूः ।।
सर्व-वर्णात्मिका साध्या सुसिद्धा सिद्ध-रूपिणी । हंसी हंसगती ह्रीं च ह्रींह्रीं-बीज-स्वरूपिणी ।।
हर-माता हर-सुता हर-सिद्धा हसन्तिका । हर्य्यक्ष-वाहना हैमी हिमाचल-सुताह्वया ।।
हैम-तनी हैमवती हांहींहूंहैं-विभाविनी । हूं-बीजा हौं-स्वरूपा च हूंकारा हूं-कृतिश्च हौं ।।
हर-नाथा हास्य-रता हा-हा-कारा हरात्मिका । हा-हा-वर्णमयी ह्येषा हिरण्याक्ष-कलेवरा ।।
हर-प्राणा हर-गतिर्हस्तिनी हस्ति-रूपिणी । हस्त-भूषा हस्त-बाही क्षमा क्षान्तिः क्षमा-वरा ।।
क्षांक्षींक्षूंक्षैंक्षौं-स्वरूपा क्षँक्षःक्षूं-वर्णभासुरा, क्षौं-बीजा क्षमक्षमाल-वाक् क्ष्म्रीं-बीजाक्षररूपिणी ।।
क्षेत्रपाल-प्रिया क्षेत्रा क्षेत्र-पूज्या क्षयार्तिहा । क्षमा-पाला क्षेम-रूपा क्षेम्या क्षेमकरी क्षुधा ।।
क्षुत्पिपासा क्षरा क्षीरा क्षीर-रूपा क्षरन्तिका । क्षीणमध्या क्षीणतनुः क्षोभिणी क्षोभकारिणी ।।
क्षामोदरी क्षेत्र-वीरा अरुणा अमराश्रया । अतसी-पुष्प-सङ्काशा अतसी-पुष्प-भूषणा ।।
अमरीकुण्डली अम्बा अम्बाली अँ-स्वरूपिणी । अष्टसिद्धिः अम्बिका च अम्बाला अश्ववाहना ।।
आत्मीया आसना आर्या आर्यावर्तेश्वरी मता । आमर्या आत्मगा आज्ञा आत्मज्ञान-परायणा ।।
आनन्दानन्ददा आद्या आद्यशक्ति-स्वरूपधृक् । आत्मिका आधिनिर्मुक्ता आत्मपुष्पप्रियङ्करी ।।
इधिका इष्ट-रूपा च इन्द्र-रूप-विभाविनी । इतिश्रीरूप-सन्तुष्टा इच्छासिद्धिः इरा इषुः ।।
इक्षु-प्रीता इक्षु-रसा इक्षु-कोदण्ड-धारिणी । इँ-भैरवी इँ-भवानी इँ-तारा इँ-महोग्रिका ।।
ईङ्कार-निलया ईशा ईश्वरी ईश-पूजिता । ई-रूपा ई-विभूषा च ई-ई-ई-वर्ण-रूपिणी ।।
ईश-माता ईश-लिङ्गा ईश-योनि-भवा तथा । ई-ई-शब्द-परा उक्तिः उपमान-विहीनका ।।
उमा-कान्ता उमा उष्णा उष्ण-भोजन-तत्परा । उद्धता ऊर्ध्वाराध्या ऊ-ऊ-वर्ण-विभाविनी ।।
ऋद्धिदा ऋद्धिमाता च ऋद्धिदात्री ऋणार्त्तिहा, ऋणहन्त्री ऋणप्रीता ऋङ्कारा ऋँ-स्वरूपिणी।।
लृकार-वर्ण-निलया लृकार-रूप-शोभिता । लृङ्कारा लृ-परा एका एकाक्षी एक-रूपिणी ।।
एणी-दृशा एण-गर्भा एण-माता च एं-गतिः । एं-बीज-निलया चैक्या एं-कार-रूप-धारिणी ।।
एं-रूपा एं-स्वरूपा च ऐक्य-सत्य-परायणा । ऐन्द्री ऐशान-वासी च ऐश्वर्या ओं-स्वरूपिणी ।।
ओषधी ओ-स्वरूपा च ओङ्काराक्षर-रूपिणी । औंकारा औं-विभूषाढ्या औऔ-वर्ण-विवेकिनी ।।
अँ-बीजनिलया अम्बा अम्बान्ता अम्बिका तथा । अँ-वँ-वर्गविभूषाढ्या अन्तर्गर्भा च अः-कला ।।
अः-कार-वर्ण-सर्वस्वा करुणा कमला कला । काली कामदुघा कम्बु-कण्ठी कृष्ण-प्रपूजिता ।।

कुलचूड़ामणिः कुण्डपुष्पप्रोता कृपा कृषिः । कृष्णाङ्गी कुलिशाङ्गी च कलशस्था करालिनी ॥
कपालमालाभरणा कङ्काली कालसुन्दरी । क्रौङ्कारी क्रौं-स्वरूपा च क्रौंकारी क्रः-स्वरूपिणी ॥
क्रौं-षट्करूपिणी क्रुद्धा कुण्डांबा कुण्डभूषिता, क्लांक्लींक्लूंक्लैंक्लौं-स्वरूपा क्लः स्वरूपा कलावती
कमला कमलाराध्या कञ्ज-नेत्रा कथानका । काम-प्रीता काम-तुष्टा काम-प्रेम-परायणा ॥
कला-पति-विभूषाढ्या कामिनी कुच-मण्डला । कुच-रूपा कुच-रमा कुल-कृत् कुल-वर्धिनी ॥
कल्पना कामना कामा कामार्त्ता काम-रूपिणी । कामेशी काम-विद्या च कामदेव-प्रपूजिता ॥
काम-माया काम-गतिः कलि-कल्मष-नाशिनी । करुणा करुणाधारा कुण्ड-गोलोद्भवात्मिका ॥
कुण्ड-पूज्या कुण्ड-रता कुण्ड-चुम्बन-तत्परा । कुमारी-पूजन-रता कुमारी-व्रत-तोषिता ॥
कुमारी-भक्ति-सुखिनी कुमारी-रूप-धारिणी । कुमारी-सेवका-सङ्गा कुमारी-सेवकालया ॥
कौलिनी कोकनासा च कोशला किन्नरी कविः । खड्गायुधा खड्गभूषा खड्गखर्परधारिणी ॥
खङ्कारा खीं-स्वरूपा च खें-स्वरूपा च खः परा । खीङ्कारा खं-गतिः खिन्ना खेचरी खगगामिनी ॥
खड्ग-रावण-रूपा च खड्ग-रावण-पूजिता । खट्वाङ्गा खर-निर्नाशा खे-खे-शब्द-परायणा ॥
गङ्गा गोदावरी गोप्त्री गोमती गो-स्तनी गतिः । गीता गणेश-सन्तुष्टा गांगींगूं गैं-स्वरूपिणी ॥
गोंगौंगंगः स्वरूपाढ्या ग्लौं-बीजा गौ-स्वरूपिणी । गान-तुष्टा गान-रता गीत-ताल-विनोदिनी ॥
घण्टाकर्णा घटाकाशा घ्रीं-बीजा घे-स्वरूपिणी । घे-घे-वर्ण-स्वरूपा च घ्रीं-घण्टा-रूपिणी घटा ॥
घण्टा-निनाद-सन्तुष्टा घण्टा-वादन-तत्परा । घटोदरी घट-मयी घट-सरस्वती घ्रांघ्रीं ॥
घ्रूं घ्रैं घ्रौंघ्रः-वर्ण-रूपा घट-कुण्डा घट-स्तनी । घोर-रूपा घोरकाली घोरतारा च घुर्घुरा ॥
घ्रैं घ्रौं-मतिमयी घूर्णा घूर्णिताक्षी च घूर्णिता । ङकारा ङक्षरा ङन्ता ङांङींङूंङैं-स्वरूपिणी ॥
चतुर्भुजा चकोराक्षी चान्द्री चन्द्र-निभानना । चपलाचपला चित्रा चित्रिणी चित्र-रूपिणी ॥
चारु-नेत्रा चारु-नासा चमरी-कुटिलानना । चमत्कार-करी चक्षुश्चेतना चेतना-मयी ॥
चौर-स्तम्भकरी चीना चीन-मार्ग-परायणा । चीन-तुष्टा चीन-रता चैना चित्त-स्वरूपिणी ॥
च्रौं-बीज-निलया चांचींचूं चैं चौंचः-स्वरूपिणी । चर्म-मात्रा चर्म-तुष्टा चण्डी चण्ड-पराक्रमा ॥
चंड-मुण्ड-निहन्त्री च चतुरा चीन-सुन्दरी । चोदयित्री चूर्ण-गर्भा चांडाली चंचु-सुन्दरी ॥
चिन्तामणि-प्रिया चिन्ता चिन्तितार्थ-परायणा । चामीकर-प्रभा चर्या चर्यानाथ-प्रपूजिता ॥
चोलनाथा चारु-केशी चामरै रूप-शोभिता । छिन्ना छिन्न-शिरा देव्या छिन्नमस्ता छल-प्रिया ॥
छकारवर्णनिलया छांछींछूं छैं-स्वरूपिणी । छौंछः स्वरूपा छत्रा च छत्र-धारी च छत्रदा ॥
छूङ्कारी छत्र-निर्मुक्ता छत्र-नाशन-कारिणी । छिन्न-हस्ता छिन्नमुण्डा छेदनोद्युक्तमानसा ॥
जन्म-कर्त्री जन्म-दात्री जरा-दारिद्रय-नाशिनी । जीव-रूपा जीव-चक्रा जीव-पूज्या जवेश्वरी ॥
जीव-चक्र-प्रसूना च जीव-चक्र-प्रपूजिका । जीव-माता जीव-करी जीवनी जीवनौषधी ॥

जांजींजूं जैं जाड्य-हन्त्री जाड्य-छेदन-कारिणी । जौंजः जैनस्वरूपा च जन्म-सन्ताप-नाशिनी ॥
जूङ्कारी जीर्ण-तपना जीर्ण-वेशा च जीर्णजा । जीव-चक्र-प्रगमना जीव-चक्रेश्वरी जवा ॥
जवा-जावक-रूपा च जवा-जावक-पूजिता । जवा-पुष्प-प्रिया जोगी जित-प्रेमा च जामली ॥
जाड्य-छेदन-सन्तुष्टा जाड्य-चर्वण-तत्परा । जगतां जननी जीं-जूं-जीं-जा-रूपा जरातुरा ॥
जीव-चक्र-प्रेम-तुष्टा जीव-चक्र-प्रभोजिनी । जीव-चक्र प्रमोदा च जीव-मात्र-प्रमोद-धृक् ॥
जामातृ-वरदा जी-जी-शब्द-पारायण-प्रिया । जीव-मात्र-प्रेम-दात्री जीव-मात्र-जवा-वती ॥
जवमात्रा ज्योतिषाङ्गा ज्योतिषाज्योतिरूपिणी, ज्योतिरूपा ज्योतिकरी ज्योषा ज्योतिधरा जया
जयावती जय-करी जयदा जित्वरी जगत् । जैत्री जैनेश्वरी जारा जार-रूपा च जीवभूः ॥
जार-प्रीता जार-माता जनानन्द-प्रकाशिनी । जालन्धरी जालपा च जालपा-वर-दायिनी ॥
जयावती जोत्र-जिजी जीव-सौख्य-परायणा । जमलार्जुन-मध्यस्था जमलार्जुन-नाशिनी ॥
जाती-पुष्प-प्रिया जाती जाती-फल-विभोजिनी, जाती-पत्र-प्रिय-प्राणा जाती-कोशोपशोभिता॥
झोटिंगा झोंगदा झंझा झंझा-वायु-स्वरूपिणी । झंझा-रूपा झैं-स्वरूपा झांझोंझूं झैं-स्वरूपिणी ॥
झूं-बीज-निलया झार्णा ञकाराक्षर-प्रोषिता । ञँ-बीज-निलया ञान्ता ञूं-स्वरूपा ञ-कारभूः ॥
टङ्कारा टङ्क-भूषाढ्या टङ्काराक्षर-मालिनी । टङ्कार-वर्ण-सर्वाङ्गा टाङ्कार-भूषिताम्बरा ॥
टांकार-गर्भा टीका च टीका-टिप्पण-कारिणी । टंक-शब्दा टंक-भूमिष्टांकारैः परिवेष्टिता॥
टूँ-स्वरूपा च टूंकारा टांकार-पद्म-भूषणा । टँटँ-शब्द-परा टिंटिंटिंटिं-शब्द-परायणा ॥
ठकार-कूट-निलया ठठ-शब्द-परायणा । ठांठींठूंठैं-स्वरूपा च ठौंठः-स्वाहा-स्वरूप-धृक् ॥
ठांठां-वर्णमयी ठौंठौं-शब्द-घोष-परायणा । ठीं-बीजा ठंठं-वर्णा च ठँठँ-शब्द-परायणा ॥
ठँठ-घोष-रता ठँठींठँठ-वाद्य-विनोदिनी । डमरूर्डाकिनी डीं च डांडींडूंडैं-स्वरूपिणी ॥
डमरू डैं-स्वरूपा च डामरी डामराम्बिका । डामर्यम्बा डकारेशी डिंडी-स्वर-परायणा ॥
डिण्डी-रव-वर-प्रीता डिण्डी-रव-विभूषिता । डिण्डी-रव-प्रिय-प्राणा डामरी डँ-स्वरूपिणी ॥
डौं डेन्त्यक्षर-सम्प्रीता डींडीं-शब्द-परायणा । डींडींडींडीं-स्वर-रता ढक्का ढक्कार-वाद्य-भूः ॥
ढांढींढूं ढैं ढौंढः-रूपा ढः-स्वरा ढिं-विभाविनी । ढीं-बीज-निलया ढं-ढं-वर्ण-पारायण-क्रमा ॥
ढैंकारी ढं-बीज-जपा ढीं-ढीं-स्वाहा-स्वरूपिणी, ढौं फट् ढ्रींढ्रूं वर्ण-युग्मा ढां-स्वाहा-वर्ण-रूपिणी॥
ढं-ढं-शब्द-रता ढीं-ढीं-वाद्य-घोष-परायणा । णकारा णां-वर्ण-पारा णां-णीं-वर्ण-जपोद्यता ॥
णूं-णैं-जपाह्लाद-रता णः शब्द-शक्ति-तत्परा । णीं-बीजाक्षर-रूपा च णौं-कूट-सिद्धि-दायिनी ॥
णूं-बीज-जप-सन्तुष्टा अक्षरा अक्ष-संयुता ॥ ॐ नमः ॥

॥ फल-श्रुति ॥

इत्येवं नाम-साहस्रं महोग्रायाः प्रकीर्तितम् ॥
कथितं दक्षिणा-काल्या शङ्कराय वरार्थिने । क्रोधोपशमनं नाम शान्ति-स्वस्त्ययनं परम् ॥

मन्त्र-रूपं महेशानि ! नाम-साहस्रमुत्तमम् । पठेद्वा पाठयेद्वापि शृणोति श्रावयेदपि ॥
सर्व-पाप-विनिर्मुक्तः स याति तारिणी-पदम् । प्रभाते चाथ मध्याह्ने रात्रावपि निशा-मुखे ॥
सर्व-संकटमुत्तीर्णः सर्व-सिद्धि-समन्वितः । स राजा स च विज्ञानी यस्तारा-नाम-चिन्तकः ॥
अष्टम्यां च नवम्यां च चतुर्दश्यां भृगोर्दिने । भौमे शनौ कुहू-युक्ते संक्रान्त्यां कुल-ऋक्षके ॥
सततं प्रपठेद्यत्नात् सर्व-सिद्धीश्वरो भवेत् । जीवेद् वर्ष-सहस्रं तु पूजान्ते प्रपठेत् सदा ॥
महामारी-भयं नैव न चाग्नि-वायु-सम्भवम् । तस्य दर्शन-मात्रेण वादिनो निःप्रभा मता ॥
राजानोऽपि च दासत्वं भजन्ते किं परे जनाः । सर्व-विद्यावतां श्रेष्ठो धनेनैव धनाधिपः ॥
वायु-तुल्यो बली लोके सर्व-शक्ति-समन्वितः । काक-वन्ध्या च या नारी मृत-वत्सा तथैव च ॥
बन्ध्या-बन्ध्याष्टके देवि ! नाम साहस्रकेण तु । भक्त्या या शृणुयान्नारी सूते पुत्रं गुणोत्तमं ॥
चिर-जीवं कवि-वरं पण्डितेन्द्रं प्रतापिनम् । भूतापस्मार-युक्तानां शिशूनां कण्ठ-भूषणम् ॥
कण्ठे वा वाम-बाहौ वा नाम-साहस्र-धारणात् । तारा-रूपा भवेत् स्त्री सा पुरुषः शङ्करो भवेत् ॥
पताकायां दुन्दुभौ तु शय्यायां चान्तरे गृहे । विताने फलके देहे लेखनाद् धारणादपि ॥
त्रैलोक्य-विजयी राजा सर्व-सिद्धीश्वरो भवेत् । सिन्दूरैः कुंकुमैः सारैः स्वयम्भू-कुण्ड-गोलजैः ॥
रक्त-चन्दन-गन्धेन लिखेद् गन्धाष्टकेन च । नखेणागुरुणा वापि त्वक्-सारेण तु वेष्टयेत् ॥
कस्तूर्या कटि-वस्त्रे तु रणे धार्यमिदं शिवे ! देवानपि विजित्वा तु त्रैलोक्यं जयति क्षणात् ॥
संग्रामे विपिने घोरे पर्वते प्राङ्गणे वने । एक-लिङ्गे देव-गेहे नद्यां योनौ च सङ्गमे ॥
कुच-चुम्बन-योगेऽपि वेश्या-गेहे श्मशानके । एतस्य पठनाद् देवि ! किन्न तस्य करे स्थितम् ॥
कविता वनिता लक्ष्मीः कीर्तिश्चैव पदे पदे । यक्षिणी पादुकाद्याश्च खड्ग-सिद्धि करे स्थिता ॥
जपान्ते मध्य-भागे वा आदावपि बलिं हरेत् । पूजादौ च तथा मध्ये पूजान्ते साधकोत्तमः ॥
बलिं दत्वा पठेत् स्तोत्रं गीत-माङ्गल्य-मण्डितः । अष्टाष्टक-समायुक्तः तारा-रूपो भवेत् क्षणात् ॥
अमायां वा चतुर्दश्यामष्टम्यां भौम-वासरे । चतुष्पथे श्मशाने वा मेष-माहिष-कुञ्जरैः ॥
मूषकैश्चटकैर्मीनैः खड्गैस्तित्तिर-सूकरैः । अजा-बलिश्च दातव्या तारां पूज्य प्रयत्नतः ॥
पठेन्नाम-सहस्रं तु तदन्ते पूजयेच्छिवाम् । मेष-रक्तैश्च रेतोभिः कामिनी-योनिजैरपि ॥
योनि-क्षालन-तोयेन तर्पणं सर्वदा चरेत् । अष्ट-सिद्धीश्वरो भूयान्मास-मात्रेण साधकः ॥
अणिमा खेचरत्वं च चराचर-पुरी-गतिः । ऊर्ध्वाधोत्क्रमणं चैव पर-काय-प्रवेशनम् ॥
भग-पूजन-संयोगे चुम्बनालिङ्गन-क्रमात् । रजो-बिन्दुः शुक्र-योगाश्च जलेनापि पार्वति ॥
अर्घ्येण तर्पणेनापि पूजा नैवेद्यकेन च । सर्वमेतत् करे देवि ! त्रि-मासाद् भवति ध्रुवम् ॥
ऋतुमत्या भगं पश्यन् संजप्य तारिणी-कलां । तदा यदुक्तं तत्-कृत्वा तारा-रूपो नरो भवेत् ॥
त्वरितं द्रुत-सिद्धित्वादुग्रतारा प्रकीर्तिता । कन्याष्टक-समुद्भूतां विद्यां दशकलां च वा ॥
कुलाकुल-क्रमोत्थां वा पंचाशत्-पीठगां च वा । आमन्त्र्यादि कुमारीं तु पुष्प-पूजादिभिः शिवे ।
प्रत्यहं पूज्य यत्नेन चतुःषष्ट्युपचारकैः । हेमैर्वस्त्रैर्फलैः पुष्पैर्भक्ष्यैर्भोज्यादिभिः शिवे ॥
सन्तोष्य प्रजपेन्मन्त्रं पूजान्ते साधकोत्तमः । ततो नाम-सहस्रं तु प्रजपेद् देवि ! सिद्धये ॥
ततो विसर्ज्य तां देवीं विहरेत यथा सुखम् । यद्यद्-वांछति कामानि तत्-तदाप्नोति नित्यशः ॥

विद्या-कवित्व-कामो हि तारा-चक्रं भगे लिखेत् । तारां पूज्य प्रयत्नेन जपांते तल्लिहन् जपेत् ॥
सर्व-विद्येश्वरो भूयात् सप्ताहेन नरोत्तमः । अविकारी भवेद् देवि ! तदैतद् वै समाचरेत् ॥
अश्रुतान्यपि शास्त्राणि वेदादीनि त्रि-मासतः । दृष्ट्वा पाठेन सिद्धिः स्याद् विकार-रहितस्य च ॥
युवती-मण्डले स्थित्वा यन्त्रं मन्त्रं चरेत् कृती । यद्यन्मन्त्रं जपेद् देवि ! तस्य सिद्धिः करे भवेत् ॥
विष्णु-नाम न च ग्राह्यं शक्ति-नाम-परायणः । अन्यालापो न कर्तव्यस्त्वन्य-चिन्तां न कारयेत् ॥
यदुक्तं हि भवेदत्र तदेव व्रतमाचरेत् । तारा तस्य प्रसन्ना स्यान्नात्र कार्या विचारणा ॥
सहस्रं करवीराणां प्रति-नाम्ना स्व-चक्रके । पूजयेद्धि जपान्ते च कुमारीं पूजयेच्छिवे ॥
सन्तोष्य भोजयेद् भक्त्या वस्त्रं दत्वा च दक्षिणां । जप्त्वा मूलं सहस्रं तु तारा-दर्शनमाप्नुयात् ॥
कमलैः पूजयेत् तारां प्रति-नाम्ना जपान्तिके । सर्व-सिद्धीश्वरो भूयान्नात्र कार्या विचारणा ॥
शत-वारं पठेदेतत् सर्व-काममुपालभेत् । सहस्र-वारं प्रजपेत् स्वप्ने पश्यति देवताम् ॥
लक्ष-वारं पठेद् देवि ! पूज्य यत्नेन पार्वति ! देव-राज-समो भूत्वा मधुमत्यादिमाप्नुयात् ॥
कोटि-वारं कीर्त्तयेद् यो साक्षात् तारा-मयो भवेत् । अमायां चंद्र-संदर्शस्तस्य हस्त-गतो भवेत् ॥
जल-वायु-गजाननां च वह्नि-वेताल-रक्षसां । ब्रह्म-राक्षस-संघानां स्तम्भनं पल-मात्रतः ॥
नवनीतं समादाय दत्वा बन्ध्या-स्त्रियै पठन् । साऽपि पुत्रमवाप्नोति काम-रूप-धरं विभुम् ॥
कलशं स्थाप्य चक्रस्थं ग्रह-ग्रस्तं विबोधयेत् । नाम्ना प्रसेचयेद् देवि ! सर्व-ग्रह-विनाशनम् ॥
नेदं प्रकाशयेद्धीमान् सुपुत्रायाऽपि नो वदेत् । दूषकाय दुराचार-रताय गुरु-निन्दके ॥
यदि दद्यात् प्रमादेन देवता-क्रोधमाप्नुयात् । देव्यै निवेदितं यद्-यत्तत् स्यान्शं भक्षयेन्नरः ॥
दिव्य-देह-धरो भूत्वा तारा-देहे स्थिता भवेत् । न निन्देन्मनसा वाचा निन्दकस्य फलं शृणु ॥
नैवेद्य-निन्दकं दृष्ट्वा नृत्यन्ति वटुकादयः । रक्त-पानोद्यतः सर्वे तस्मान्निन्दां न कारयेत् ॥
वटुकं पूजयेन्नित्यं प्रजपेदपि नित्यशः । तदा सिद्धिमवाप्नोति नान्यथा शाङ्करं वचः ॥
पुस्तकं पूजयेद् यत्नाच्चक्र-पूजाद्यभावके । यद्-गेहे वर्त्तते स्तोत्रं तत्र लक्ष्मीर्ध्रुवं वसेत् ॥
देवी 'कला' भवेत्तस्य त्रैलोक्येष्वपराजितः । न च मारी-भयं तत्र जलाग्नि-प्रेत-सम्भवम् ॥
भूतापस्मार-कुष्ठादि-रोगाणां न च सम्भवः । प्रत्यहं प्रजपेत् स्तोत्रं त्रिकालं प्रपठेत् सुधीः ॥
श्लोकार्धमपि प्रयत्नेन प्रत्यहं प्रपठेत् सुधीः । अबन्ध्यं दिवसं कुर्याद् दान-पूजा-जपादिषु ॥
तारिणीं कीर्त्तयेन्नित्यं शिव-नाम प्रकीर्त्तयेत् । साधकाय विशुद्धाय भक्त-भक्ताय मन्त्रिणे ॥
पूजा-जपादि-युक्ताय वैष्णवाय शैवाय च । दुर्गा-भक्ताय देयं स्याद् गुण-हीनाय नो वदेत् ॥
स्त्री-द्वेष्टायाऽथ शप्ताय गुरु-दैवत-दूषके । खलाय पर-तन्त्राय विशेषेण वदेन्नहि ॥
पठनीयं विशेषेण प्रातर्मध्यार्ध - रात्रके । रहस्याति - रहस्यं च रहस्याति - रहस्यकम् ॥
गोपनीयं गोपनीयं गोपनीयं स्व-योनि-वत् ॥

॥ श्रीमदादिनाथ-विरचितायां महाकाल-संहितायां तारा-खण्डे श्रीहर-पार्वती-सम्वादे
श्रीमदाद्या-प्रोक्तं श्रीमद्-द्वितीयायाः क्रोधोपशमनाख्यं सहस्र-नाम स्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥
॥ श्रीमहोग्रताराऽर्पणमस्तु ॥

हिन्दी रूपान्तर

सभी पीठों में श्रेष्ठ हिंगुल नामक पीठ पर सदा स्तोत्र-पारायण में रत, शान्त और मौन धारण किये हुये तेजस्वी शरीरवाले महारुद्र को बैठे देखकर महामाया पार्वती ने प्रेमपूर्वक कहा—हे नाथ ! आप सदा किसका जप और स्मरण करते रहते हैं ? आपका क्रोध कैसे शान्त हुआ ? यदि मैं आपकी प्रिया हूँ, तो कृपया उसे कहिये।

श्री शिवजी बोले— मैं रहस्याति-रहस्य बताता हूँ, जिससे बिना मन्त्र, यन्त्र, कवच, स्तोत्र तथा जप के ही श्री तारा कृपा करती हैं। मैं सदा तारा का ही अर्चन, स्मरण और जप करता हूँ और उनकी ही कृपा से मेरे क्रोध की शान्ति हुई और मैं सुखी हुआ। वीरभद्रावतार में मैं अत्यन्त क्रोधवान् था, मेरे क्रोध से तीनों लोक भस्म हो रहे थे। तब मैंने वीर-साधन-पूर्वक श्रीकाली का स्मरण किया। श्रीकाली ने मुझसे 'श्रीतारा सहस्रनाम' कहा और तब मेरे क्रोध की शान्ति हुई।

मद्य-मांस, मत्स्य, मेद और मज्जा से भक्तिपूर्वक तर्पण करने से श्री तारा कृपालु होती हैं। कोटि-कोटि ब्रह्माण्ड योनि-मण्डल में स्थित हैं। उनके अन्त में वह रहती है। जिसके प्रकाश से समस्त विश्व प्रकाशित होता है, उसका सहस्रनाम स्तोत्र कहता हूँ। इसे प्रयत्नपूर्वक गुप्त रखना।

विनियोग—इस क्रोधोपशमन नामक श्री महोग्रतारा के अति गुप्त दिव्य सहस्रनाम स्तोत्र के श्री अक्षोभ्य ऋषि हैं, बृहती छन्द है, श्रीउग्रतारा-स्वरूपा श्रीशिव की प्राणशक्ति-चिद्रूपिणी कुण्डलिनी देवता हैं, 'हूँ' बीज है, 'फट्' शक्ति है, 'स्वाहा' कीलक है और परम-शिवत्व-प्राप्ति की कामना-सहित धर्मार्थ-काम-मोक्ष की सिद्धि, तीव्र कवित्व-शक्ति की प्राप्ति तथा उग्रतारा, एकजटा और नील-सरस्वती के मन्त्रों की सिद्धि के लिये इसके जप या पाठ का विनियोग है।

पाठ-विधि—'ॐ हंसः सोऽहं' की भावना-पूर्वक स्वयं को शिव-स्वरूप समझ श्रीगुरुदेव को प्रणाम करके इष्ट-देवता का स्मरण कर अपने मूलमन्त्र के ऋष्यादि, कर-षडङ्ग न्यास करे। फिर प्राणायाम, भूत-शुद्धि और इष्ट-देवता की प्राण-प्रतिष्ठा करे। साधक वीर-वेश धारण कर भस्म से त्रिपुण्ड्र और सिन्दूर से तिलक लगाकर ताम्बूल सेवन कर शिर पर श्रीगुरु अक्षोभ्य, शरीर में श्रीशिव और हृदय में अङ्ग-उपाङ्ग-सहित श्रीमहोग्रतारा, एकजटा या नील सरस्वती का ध्यान कर तन्मय हो सहस्रनाम स्तोत्र का पाठ करे।

इसके बाद पृष्ठ ४७ पर 'श्री अक्षोभ्य उवाच' के बाद 'ॐ श्रीं तारा' से लेकर पृष्ठ ५१ पर दी 'फल-श्रुति' के पूर्व 'अक्ष-संयुता' तक श्रीतारा के सहस्रनामों का उल्लेख है, जो स्पष्ट है।

'फल-श्रुति' के अन्तर्गत प्रारम्भ में इन नामों के पाठ या जप से मिलनेवाले फल का विवरण है। साथ ही बाद के कुल २४ श्लोकों में पाठ की विशिष्ट विधियाँ हैं। इन्हें केवल पूर्णाभिषिक्त साधक ही कर सकते हैं। इसी से इनका भावार्थ यहाँ नहीं दिया है। शेष भाग का सारांश इस प्रकार है—

भगवती तारा के ये सहस्रनाम क्रोध-शमन की कामना करनेवाले श्रीशङ्कर जी से श्रीदक्षिणा काली ने कहे हैं। ये नाम परमशान्ति देने से 'क्रोधोपशन' नाम से प्रसिद्ध हैं। जो इन्हें पढ़ता या पढ़वाता है अथवा सुनता या सुनाता है, वह सभी पापों से मुक्त होकर तारा-पद को प्राप्त होता है। प्रातः, दोपहर या रात्रि में पाठ करनेवाला सभी संकटों से मुक्त होकर सभी सिद्धियाँ प्राप्त करता है। जो सदा तारा

के नाम का चिन्तन करता है, वही विज्ञान का ज्ञाता है। अष्टमी, नवमी तथा चतुर्दशी को शुक्रवार, शनिवार, मंगलवार, अमावस्या, संक्रान्ति और कुल-नक्षत्र की स्थिति में सतत पाठ करनेवाला सभी सिद्धि पाता है। पूजा के अन्त में पाठ करनेवाला हजार वर्ष की आयु पाता है। उसे महामारी, अग्नि और वायु से उत्पन्न भय नहीं सताते। पाठकर्त्ता के दर्शन मात्र से प्रतिवादी निष्प्रभ हो जाते हैं। शासक भी उसके दास हो जाते हैं। अन्य लोगों का तो कहना ही क्या! वह सभी विद्याओं का ज्ञाता, धन में कुबेर के समान, बल में वायु के समान और समस्त शक्तियों से युक्त होता है। काक-बन्ध्या, मृत-वत्सा तथा अष्ट-विध वन्ध्या स्त्रियाँ यदि भक्ति-पूर्वक सहस्रनाम का श्रवण करें, तो चिरजीवी, कवियों में श्रेष्ठ, पण्डित, प्रतापी और श्रेष्ठ गुणों से युक्त पुत्र को जन्म देती हैं। भूत-बाधा और अपस्मार (मिर्गी) वाले बालकों के कण्ठ में स्तोत्र लिखकर धारण कराने से वे व्याधि-मुक्त हो जाते हैं। कण्ठ या बायें हाथ में (पुरुष दाहिने हाथ में) धारण करनेवाली स्त्री श्रीतारा-स्वरूपिणी और पुरुष शिव-स्वरूप होता है। पताका (झण्डा), फलक (तख्ता, पट्ट या दीवार), शय्या, घर के भीतर, वितान (शामियाना या चन्दोवा), दुन्दुभी (नगाड़ा या ढोल) तथा अपने शरीर पर लिखने और धारण करनेवाला त्रैलोक्य-विजयी और सर्व-सिद्धीश्वर होता है।

शक्ति के उपासक को विष्णु का नाम लेना तथा सुनना वर्जित है। पाठकर्त्ता दूसरे से बात न करे, न किसी दूसरे देवता या मन्त्र का चिन्तन करे। हजार करवीर (कनैर) के पुष्पों से यन्त्र पर प्रत्येक नाम से पूजन करके जप करे। फिर भक्तिपूर्वक कुमारी की पूजा कर उसे भोजन करावे, वस्त्रादि दक्षिणा देकर मूलमन्त्र का सहस्र जप करे तो श्रीतारा का दर्शन होता है। जप के बाद प्रत्येक नाम से कमल के पुष्पों से श्रीतारा का पूजन करनेवाला सभी सिद्धियाँ पाता है। स्तोत्र के सौ पाठ करनेवाला सभी कार्यों को सिद्ध कर लेता है। हजार पाठ करनेवाला स्वप्न में श्रीतारा का दर्शन पाता है। लाख पाठ करनेवाला इन्द्र के समान होता है, उसे मधुमती विद्या सिद्ध हो जाती है। करोड़ पाठ करनेवाला साक्षात् श्रीतारा-स्वरूप हो जाता है, अमावास्या को चन्द्र-दर्शन करा देना भी उसके लिये सम्भव हो जाता है। वह पल भर में जल, अग्नि, वायु, वेताल और ब्रह्म-राक्षस आदि का स्तम्भन कर उनसे बचा लेता है। नवनीत (मक्खन) को अभिमन्त्रित कर बन्ध्या स्त्री को खिलाने से वह कामदेव के समान सुन्दर पुत्र पाती है। कलश स्थापित कर श्रीचक्र का पूजन करके ग्रह-पीड़ा-युक्त व्यक्ति का अभिषेक करने से ग्रहों की पीड़ा का नाश होता है।

इस स्तोत्र को अत्यन्त गुप्त रखे। दूषक, दुराचारी और गुरु-निन्दक को देने से देवता को क्रोध होता है। देवी को अर्पित नैवेद्य को खानेवाला दिव्य-देह-धारी होता है, श्रीतारा उसके शरीर में वास करती हैं। श्रीतारा के नैवेद्य की निन्दा मन, वचन और कर्म से भी न करे। नैवेद्य-निन्दक को देखकर वटुक आदि उसके रक्त-पान की कामना से नाचने लगते हैं। अतः नैवेद्य की निन्दा न करे। श्रीतारा के भक्त को नित्य वटुक का पूजन और जप करने से शीघ्र सिद्धि मिलती है। श्रीतारा-चक्र (यन्त्र) के अभाव में पुस्तक का ही पूजन करे। जिस घर में यह स्तोत्र रहता है, वहाँ लक्ष्मी अवश्य ही वास करती हैं। साधक देवी की कलाओं से युक्त होकर त्रिलोकी में अपराजित होता है। उसे महामारी, जल, अग्नि तथा प्रेतादि का भय नहीं होता। भूत-ज्वर, अपस्मार (मिर्गी), कुष्ठादि रोगों का भय नहीं होता। नित्य-प्रति तीनों सन्ध्याओं में स्तोत्र का पाठ करना चाहिये। चाहे आधे श्लोक का ही पाठ करे किन्तु प्रयत्नपूर्वक जप-पूजा आदि अवश्य ही प्रतिदिन करे। श्रीतारा और श्रीशिव के नाम का कीर्तन अवश्य करना चाहिये।

जप-पूजादि में रत साधक विशुद्ध बुद्धिवाले, भक्तजनों के प्रति श्रद्धालु, वैष्णव, शैव तथा दुर्गा-भक्त (दुर्गा से तात्पर्य समस्त देवियों से है) को हो यह स्तोत्र देना चाहिये। इन गुणों से हीन, स्त्रियों से द्वेष रखनेवाले, जो किसी से शापित हों, जो गुरु और देवता से द्वेष रखते हों, खल (दुष्ट) हों, दूसरे के अधीन हों—ऐसे व्यक्तियों को यह स्तोत्र कभी न देना चाहिये।

इस स्तोत्र का पाठ विशेष रूप से प्रातः, मध्याह्न (दोपहर) और अर्ध-रात्रि में करना चाहिये। इसे प्रयत्नपूर्वक गुप्त रखना चाहिये।

टिप्पणी

यह सहस्रनाम स्तोत्र 'महाकाल-संहिता' के 'श्री तारा-खण्ड' से उद्धृत है। 'महाकाल-संहिता' का अधिकांश अप्राप्य है। कुछ भाग विविध संग्रहालयों में उपलब्ध हैं, कुछ व्यक्तिगत संग्रहों में भी है, परन्तु पूरा ग्रन्थ शायद ही कहीं हो। स्तोत्रादि तथा विशिष्ट विधि-विधानों तक ही उपलब्धि सीमित है। इस स्तोत्र की प्राप्ति बड़े ही आकस्मिक ढंग से हुई थी। सागर (म० प्र०) के एक अग्रवाल परिवार के मुखिया की मृत्यु के उपरान्त उनके द्वारा एकत्रित पुस्तकें, बहियां इत्यादि रद्दी के भाव बेची जा रही थीं कि मैं उधर से निकला और कौतूहलवश रद्दी उलटने-पलटने लगा। उसमें मुझे यह सहस्रनाम स्तोत्र, दक्षिणाकाली के जगन्मङ्गल व त्रैलोक्यमोहन कवच, सुधाधारा काली स्तोत्र आदि चार-पाँच विषयों की हस्तलिखित प्रतियां मिलीं। उल्लेखनीय यह है कि उक्त-परिवार का वर्तमान पीढ़ी से २-३ पीढ़ी पीछे तक तन्त्रोपासना से दूर का भी सम्बन्ध नहीं रहा।

इस स्तोत्र की अन्य प्रतियों के लिये काफी प्रयत्न किया, पर सफलता नहीं मिली। अतः यह कहना गलत न होगा कि यह स्तोत्र पहले-पहल 'चण्डी' के द्वारा प्रकाशित हो रहा है। यदि किन्हीं महानुभाव के पास इसकी प्रति हो तो पाठान्तर प्रकाशित कराने की कृपा करेंगे।

अन्त में उल्लेखनीय है कि अधिकांश उपलब्ध स्तोत्रों की भांति इस स्तोत्र में विनियोग के बाद 'ऋष्यादि-न्यास' का उल्लेख नहीं है। उचित यही है कि विनियोग के आधार पर ऋष्यादि-न्यास कर लें यथा—

श्रीमदक्षोभ्य-ऋषये नमः शिरसि। वृहती-छन्दसे नमः मुखे। श्रीमदुग्रतारा-रूप मम प्राण-शक्ति-श्चिद्रूपिणी-कुण्डलिनी-देवतायै नमः हृदि। हूं-बीजाय नमः लिङ्गे। फट्-शक्तये नमः नाभौ। स्त्रीं-कीलकाय नमः पादयोः। मम परम-शिवत्व-प्राप्ति-कामनया..........मन्त्रस्य पाठे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

ऋष्यादि-न्यास के ही समान 'कर' और 'अङ्ग'-न्यास भी कर लेने चाहिए। तब ध्यान करके स्तोत्र-पाठ करना विधि-सम्मत है।

फल-श्रुति में स्तोत्र की अनेक प्रयोग-विधियाँ दी गई हैं, जिन्हें गुरुदेव से समझकर उनकी अनुमति से ही क्रियान्वित करना चाहिये। केवल पुस्तक में पढ़कर कोई भी साधना नहीं करनी चाहिये, अन्यथा हानि की सम्भावना रहती है।

SV
S.N
Su

Su